# किशनगढ़ राज्य
और
# महाराजा सुमेर सिंह

जगन्नाथ प्रसाद मिश्र

सजय प्रकाशन
प्रेम नगर, एटा (उ० प्र०)

प्रकाशक
शीला मिश्र
संजय प्रकाशन
प्रेम नगर [illegible] (उ० प्र०)



प्रथम संस्करण १९७२

मूल्य ११.०० रुपये

मुद्रक
आर० के० प्रिंटर्स
८० डी, कमला नगर
दिल्ली ७



किशनगढ नरेश

हिज़ हाईनैस उम्दये राजहाय बुलंद मकान
महाराजाधिराज महाराजा श्री सुमेर सिंह जी
बहादुर
की
पुण्य स्मृति मे
सादर
समर्पित

# अन्तर्मन से

मनुष्य का चरित्र ही उसके गुणो-अवगुणो की सही कसौटी है। चरित्र-हीन व्यक्ति अपने धन, ऐश्वय एव अधिकार के बल पर समाज के कुछ लोगो म सम्मान तो प्राप्त कर सकता है किन्तु वह जनसाधारण की श्रद्धा का पात्र कभी नही बन सकता।

किशनगढ नरेश महाराजा सुमेर सिंह के राज्यपद छोडने के २३ वष उपरात भी भूतपूव किशनगढ राज्य की जनता के हृदय मे उनके प्रति श्रद्धा एव स्नेह की भावना बने रहने का आधार महाराजा के चारित्रिक गुण ही हो सकते हैं।

लक्ष्मी अमत है, विष है और वारुणी भी। किन्तु इसका वारुणी रूप ही सबसे अधिक प्रभावशाली होता है। वारुणी के तो केवल सेवन से ही मादकता आती है किन्तु लक्ष्मी रूपी वारुणी तो हर समय मादक बनाए रहती है —

कनक, कनक त सौ गुनी, मादकता अधिकाय।
वा खाय बौराये नर या पाय बौराय॥

यदि लक्ष्मी क साथ साथ शासनाधिकार भी हो तो यह मादकता गव के साथ मिश्रित होकर और भी गहरा रग लाती है।

महाराजा सुमेर सिंह जी का जन्म एक साधारण परिवार मे हुआ था, किन्तु किशनगढ राज्य का ऐश्वय भरा वभव एव राज्य पद पाकर भी उनमें किसी प्रकार का गव लेश मात्र भी न था।

किशनगढ राजवश वैष्णवी परम्परा म भगवान कृष्ण के बाल रूप के उपासक वल्लभ सम्प्रदाय का अनुयायी है। धार्मिकता, वीरता, राजनैतिक कुशलता एव साहित्य व कला प्रेम का अद्भुत समन्वय इस वश की परम्परा रही है। अपने धम क कट्टर अनुयायी होते हुए भी यहाँ के शासको ने अन्य धर्मों का समुचित आदर करके धम निरपेक्षता का भी उज्ज्वल आदश प्रस्तुत किया है। यही कारण है कि जन धम व इस्लाम धम भी यहाँ वैष्णव धम के समान ही फले फूले तथा साम्प्रदायिक वैमनस्य के अकुर इस भूमि पर कभी नही पनप सके।

रियासत के भारतीय संघ में संविलयन के उपरान्त भी स्वर्गीय महाराजा सुमेर सिंह ने अपनी वंशानुगत परम्पराओं को निभाते हुए भारतीय संस्कृति की ज्योति को प्रज्वलित रख कर भौतिकवादी पाश्चात्य सभ्यता के मृगतृष्णा-प्रेमी भारतीयों के लिये एक आदर्श प्रस्तुत किया है। उनकी जीवन कहानी नवयुवकों के लिये जीवन के हर क्षेत्र में उत्साह एवं प्रेरणा का स्रोत बन सकती है।

प्रस्तुत पुस्तक में महाराजा सुमेर सिंह जी के जीवन चरित्र से पूर्व किशनगढ़ राज्य का संक्षिप्त इतिहास एवं वहाँ की परम्पराओं का दिग्दर्शन भी कराया गया है क्योंकि हमारे पूर्वजों का इतिहास ही हमारे लिये उनकी सच्ची विरासत है। महाराजा सुमेर सिंह ने उस विरासत को, भावी पीढ़ियों के लिये किस प्रकार अक्षुण्ण रखा यही दर्शाना इस पुस्तक का उद्देश्य है।

इस पुस्तक के लिखने में महाराजा साहब के निजी सचिव श्री घनश्याम दास जी गुप्त, डाक्टर रामप्रसाद शर्मा, डाक्टर फय्याज अली साहब, महाराज अर्जुन सिंह जी एवं स्वर्गीय महाराजा साहब के अभिन्न मित्र व सहपाठी श्री मुहब्बत सिंह जी के सहयोग का मैं विशेष आभारी हूँ।

जगन्नाथ प्रसाद मिश्र

सहायक ग्रंथ —

इम्पीरियल गजेटियर आफ इण्डिया, रिपोर्ट आफ द ज्योलोजी आफ द किशनगढ़ स्टेट, किशनगढ़ रियासत के पुराने रिकार्ड, किशनगढ़ रियासत की दैनिक रिपोर्ट, मेयो कालिज की वार्षिक पत्रिका तथा कालिज गैलरी के नाम-पट्ट (Boards)।

# अनुक्रमणिका


| | | पृष्ठ |
|---|---|---|
| १ | राज्य का ध्वज | ६ |
| २ | भूगोल | ११ |
| ३ | इतिहास परिचय | १५ |
| ४ | रियासत के सस्थापक—महाराजा किशन सिंह | १७ |
| ५ | महाराजा सहसमल्ल | १६ |
| ६ | महाराजा जगमाल सिंह | २० |
| ७ | महाराजा हरी सिंह | २१ |
| ८ | महाराजा रूप सिंह | २१ |
| ९ | राज कुमारी चारुमती | २५ |
| १० | महाराजा मान सिंह | २८ |
| ११ | महाराजा राज सिंह | २९ |
| १२ | महाराजा सावन्त सिंह | ३१ |
| १३ | महाराजा सरदार सिंह | ३४ |
| १४ | महाराजा बहादुर सिंह | ३५ |
| १५ | महाराजा बिडद सिंह | ३६ |
| १६ | महाराजा प्रताप सिंह | ३७ |
| १७ | महाराजा कल्याण सिंह | ३८ |
| १८ | महाराजा मोखम सिंह | ३९ |
| १९ | महाराजा पृथ्वी सिंह | ४० |
| २० | महाराजा शार्दूल सिंह | ४२ |
| २१ | महाराजा मदन सिंह | ४३ |
| २२ | महाराजा यज्ञ सिंह | ४८ |


## महाराजा सुमेर सिंह (जीवन चरित्र)

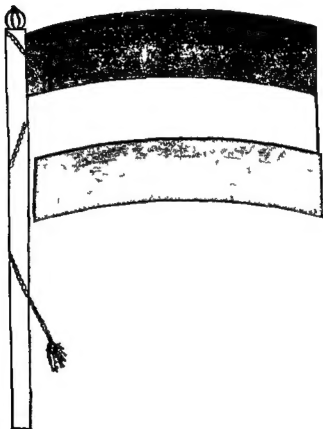

| | | |
|---|---|---|
| १ | बाल्यावस्था | ५२ |
| २ | प्रारम्भिक शिक्षा | ५४ |
| ३ | राज्य का उत्तराधिकार | ५६ |
| ४ | मेयो कालिज मे | ५८ |
| ५ | राज्याधिकार | ६४ |

पृष्ठ

६ राज्य का शासन प्रबन्ध ६७
७ रेजीडेंट के अधिकार में राज्य (minority Government) ७४
८ शासन सुधार ७६
९ विलीनीकरण ७७
१० भारत सरकार से समझौता ८०
११ रियासत का योगदान ९०
१२ विवाह ९१
१३ गृहस्थ जीवन ९३
१४ चरित्र ९४
१५ धार्मिक आस्था ९७
१६ कला प्रेम ९९
१७ खेलों में रुचि १००
१८ शिकार १०४
१९ राजनैतिक जीवन १०९
२० सामाजिक सेवा ११२
२१ जनता पर प्रभाव ११४
२२ अंतिम लीला ११५
२३ महाराजा सुमेर सिंह का परिवार ११७
२४ महाराजा ब्रजराज सिंह १२१
२५ राजवंश के रीति रिवाज एवं परम्पराएं १२६
२६ प्रचलित कथाएँ १३०
२७ किशनगढ़ राज्य की सांस्कृतिक देन १३३
२८ उत्सव व त्यौहार १४६
२९ दर्शनीय स्थान १४९
३० परिशिष्ट १५६

## किशनगढ राज्य का ध्वज

श्याम सुन्दर लाल



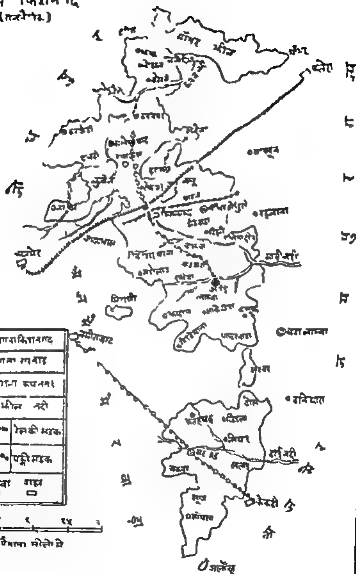



किशनगढ राज्य का राज चिह्न

# राज्य का ध्वज

इस झण्डे को महाराजा रूप सिंह ने बलख के युद्ध में पठानों से छीन कर अपने राज्य का झण्डा बनाया था तथा इसके काले, सफेद और लाल रंग के कारण इसका नाम श्याम सुन्दर लाल रखा।

इसमें काला रंग तमोगुण, सफेद रंग सतोगुण और लाल रंग रजोगुण का प्रतीक है। इन तीनों रंगों की पट्टियां आकार में परस्पर एक समान हैं जिसका तात्पर्य है कि तमोगुण, सतोगुण एवं रजोगुण, ये तीनों गुण समान रूप से बराबर ही रहने चाहिएं क्योंकि रजोगुण की वृद्धि प्रजा के लिए हानिकारक एवं कष्टदायक होती है। तमोगुण में वृद्धि होने से प्रजा में क्रान्ति की भावना बलवती हो उठती है तथा जब सतोगुण वृद्धि को प्राप्त करता है तो राजा की मनोवृत्ति वैराग्य की ओर अग्रसर होने लगती है। यह भी प्रजा के हित में उचित नहीं होता। इसलिए राज्य प्रबन्ध के संचालन में तमोगुण, रजोगुण एवं सतोगुण तीनों ही गुणों का समान समन्वय एवं सन्तुलन बना रहना अति आवश्यक है। तब ही राज्य में सुख, शान्ति एवं समृद्धि बनी रह सकती है।



नक़शा
राज्य किशनगढ़
रेल की सड़क
पक्की सड़क
गाँव
कस्बा
शहर
पैमाना मीलों में

# भूगोल

देशी राज्यो के भारतीय संघ मे सविलयन से पूर्व राजस्थान का नाम राजपूताना था। राजपूतो की वीर भूमि उसी राजपूताने के हृदय स्थल मे राठौर वंशीय राजपूतो की एक छोटी सी रियासत किशनगढ़ २६° १७' व २६° ५६ उत्तरी अक्षाशो तथा ७४° ४३ व ७५° १३ पूर्वी देशान्तरो के मध्य स्थित थी। इसमे २१० गांव थे। रियासत का कुल क्षेत्रफल ८५८ वर्ग मील था। उसके उत्तर मे जोधपुर राज्य था, पूर्व मे जयपुर राज्य दक्षिण पश्चिम मे ब्रिटिश राज्य का अजमेर सूबा व शाहपुरा रियासत थी। दक्षिण मे मेवाड प्रदेश के उदयपुर राज्य की सीमायें उसकी सीमा को छू रही थीं।

**प्राकृतिक भाग —**

प्राकृतिक रूप से इस राज्य के तीन भाग थे —

(१) उत्तर का रेतीला भाग, जिसमे रुपनगढ का अधिकाश भाग आता है।

(२) बीच का पहाडी भाग, जिसमे रुपनगढ़ का दक्षिणी भाग और किशनगढ़ का उत्तरी भाग है। इस भाग मे दो-दो हज़ार फीट ऊंची पर्वत श्रेणियां भी हैं।

(३) मासी व डाई नदी वाला उपजाऊ व समतल भाग जो दक्षिण का उपजाऊ भाग कहलाता है।

**नदियाँ —**

इस राज्य मे वास्तविक रूप से कोई नदी नही है। जो भी नदी कही जाने वाली धाराए हैं वे केवल बरसाती हैं। वर्षा ऋतु के अतिरिक्त वर्ष के शेष भाग मे ये नदियाँ सूखी पडी रहती हैं।

इनमे से तीन मुख्य हैं —

(१) डाई नदी—अजमेर के भिनाय से निकल कर किशनगढ़ के

सरवाड़ परगने में बहती हुई जयपुर राज्य की बनास नदी में जा मिलती है।

(२) माशी नदी किशनगढ़ के गूंदोलाव तालाब में निकल कर, जयपुर राज्य में चली गई है।

(३) रूपन नदी—अजमेर का आर में आकर रूपनगर के पास बहती हुई, सांभर झील में गिरती है।

**जलवायु —**

यहाँ की जलवायु राजस्थान के अन्य नगरों से अच्छी एवं स्वास्थ्यप्रद है। अप्रेल से जून तक गर्मी पड़ती है। कभी कभी लू भी चलती है। रेतीले भागों में दिन में अधिक गर्मी तथा रात में ठंडक रहती है। जुलाई से सितंबर तक वर्षा ऋतु में गर्मी कम हो जाती है। अक्टूबर से मार्च तक जाड़े की ऋतु रहती है। वर्षा का औसत २० इंच वार्षिक है।

**उपज —**

इस राज्य की मुख्य उपज मक्का ज्वार, बाजरा, तिलहन, कपास, मूंग मोठ जौ, चना गेहूं, जीरा आदि हैं। कहीं कहीं पान भी उगाये जाते हैं।

**जंगल —**

सिलोरा, उदयसागर में इमारती पत्थर नरवर टांगड़ा में संगमरमर मिलता जुलता पत्थर तथा सरवाड़ में तामड़ा की खान पाई जाती हैं। किशनगढ़ की पहाड़ियों में खादी रंग का पत्थर तांबे व लोहे की खानें हैं। दार्मा ग्राम में अभ्रक की बड़ी खानें हैं। एक बार मदनगंज के पास नीलम भी पाया गया था।

इस राज्य का मुख्य नगर व राजधानी किशनगढ़ था जो जयपुर—अजमेर राष्ट्रीय मार्ग पर अजमेर से १६ मील पर स्थित है। राजस्थान—मालवा रेलवे लाइन पर जो अब पश्चिमी रेलवे कहलाती है किशनगढ़ रेलवे स्टेशन भी है।

अब किशनगढ़ राज्य अजमेर जिले की एक सब डिवीजन मात्र है।

**निवासी —**

ग्रामों की संख्या राज्य में अधिक होने के कारण अधिकतर निवासी ग्रामीण ही थे। राज्य में प्रत्येक जाति के व्यक्ति थे, यथा ब्राह्मण, क्षत्री वैश्य गूजर जाट माली, धाकड़ बलाई खटीक, रेगर, चमार, हरिजन आदि।

मुसलमानो मे अधिकतर पठान हैं। काजी, शेख, सैयद भी अनेक स्थानो पर कम संख्या मे बसते रहे हैं।

## पहिनावा —

पुरुष सिर पर साफा या पगडी बाँधते थे। शरीर पर अगरखी, कुर्ता, व धोती पहनते थे। स्त्रियां लहगा ओढनी, कुर्ती, कांचली और साडी व ब्लाउज भी पहनती थी।

अधिकतर चाँदी के गहनो का प्रचलन था, किन्तु धनवान व्यक्ति सोने के गहने पहनते थे। राजपूतो की स्त्रियाँ हाथी दाँत के चूडे भी पहनती थी। गूजर व जाटो की स्त्रिया सामान्यत लाख व पीतल के चूडे पहिनती थी। गूजरियो के पैरो म पीतल की नेवरिया पहनी जाती थी।

## भाषा —

किशनगढ राज्य की भाषा का सर जार्ज ग्रियर्सन ने 'किशनगढी बोली' का नाम देकर उसे भारत की भाषाओं म स्थान दिया है। भाषा सम्बन्धी मानचित्रो म किशनगढ राज्य उसका क्षेत्र बतलाया गया है। यह भाषा उत्तर मे जोधपुर की बोली से, दक्षिण म मेवाडी स और पूर्व म जयपुरी भाषा से प्रभावित प्रतीत होती है। वसे अधिकांशत ढूँढारी व मारवाडी का सम्मिश्रण ही पाया जाता है।

लिखने पढने की मुख्य भाषा हिन्दी ही रही है। यहाँ के लोग व्यापारिक खाते लिखने मे हिन्दी व किशनगढी दोनो ही भाषाओं का प्रयोग करते हैं।

सरवाड परगने म बहती हुई जयपुर राज्य का बनास नदी म जा मिलती है।

(२) मासी नदी किशनगढ़ के गूंदोलाव तालाब म निकल कर, जयपुर राज्य म चली गई है।

(३) रुपन नदी—अजमेर की ओर स आकर रुपनगर के पास बहती हुई, सांभर झील म गिरती है।

## जलवायु —

यहाँ की जलवायु राजस्थान क बहुत स नगरा से अच्छी एव स्वास्थ्यप्रद है। अप्रल से जून तक गर्मी पडती है। कभी कभी लू भी चलती है। रेतील भागा म दिन म अधिक गर्मी तथा रात म ठण्ड रहती है। जुलाई से सितबर तक वर्षा ऋतु मे गर्मी कम हो जाती है। अक्तूबर स मार्च तक जाडे की ऋतु रहती है। वर्षा का औसत २० इच वार्षिक है।

## उपज —

इस राज्य की मुख्य उपज मक्का ज्वार, बाजरा, तिलहन कपास, मूंग, मोठ, जौ चना, गेहूँ, जीरा आदि हैं। कहीं कहीं फल भी उगाये जाते हैं।

## जगल —

मिलोरा उदयसागर म इमारती पत्थर नरवर भागडा म सगमरमर से मिलता जुलता पत्थर तथा सरवाड म तामडा की खानें पाई जाती हैं। किशन–गढ की पहाडियो म काली रग का पत्थर ताँबे व लोहे की खाने है। दादलिया ग्राम म अभ्रक की बडी खानें हैं। एक बार मदनगज के पास नीलम भी पाया गया था।

इस राज्य का मुख्य नगर व राजधानी किशनगढ था, जो जयपुर—अजमेर राष्ट्रीय मार्ग पर अजमेर से १६ मील पर स्थित है। राजस्थान—मालवा रेलवे लाइन पर जो अब पश्चिमी रलव कहलाती है किशनगढ रलव स्टेशन भी है।

अब किशनगढ राज्य अजमेर जिले की एक सब डिवीजन मात्र हैं।

## निवासी —

ग्रामा की सख्या राज्य म अधिक होने के कारण अधिकतर निवासी ग्रामीण ही थे। राज्य म प्रत्येक जाति के व्यक्ति थे यथा ब्राह्मण क्षत्री वश्य गूजर जाट माली, धाकड बलाई खटीक, रगर चमार, हरिजन आदि।

मुसलमानो में अधिकतर पठान हैं। काजी, शेख, सैयद भी अनेक स्थानों पर कम संख्या में बसते रहे हैं।

## पहिनावा —

पुरुष सिर पर साफा या पगडी बाँधते थे। शरीर पर अगरखी, कुर्ता व धोती पहनते थे। स्त्रियाँ लहंगा ओढ़नी, कुर्ती, काचली और साडी व ब्लाउज भी पहनती थी।

अधिकतर चाँदी के गहनों का प्रचलन था, किन्तु धनवान व्यक्ति सोने के गहने पहनते थे। राजपूतो की स्त्रियाँ हाथी दाँत के चूडे भी पहनती थी। गूजर व जाटो की स्त्रियाँ सामान्यत लाख व पीतल के चूडे पहिनती थी। गूजरियो के पैरो में पीतल की नवरियाँ पहनी जाती थी।

## भाषा —

किशनगढ राज्य की भाषा का सर जार्ज ग्रियर्सन ने 'किशनगढी बोली' का नाम देकर उसे भारत की भाषाओं में स्थान दिया है। भाषा सम्बन्धी मानचित्रों में किशनगढ राज्य उसका क्षेत्र बतलाया गया है। यह भाषा उत्तर में जोधपुर की बोली से दक्षिण में मेवाडी से और पूर्व में जयपुरी भाषा से प्रभावित प्रतीत होती है। वस अधिकांशत ढूँढारी व मारवाडी का सम्मिश्रण ही पाया जाता है।

लिखने पढने की मुख्य भाषा हिन्दी ही रही है। यहा के लोग व्यापारिक खाते लिखने में हिन्दी व किशनगढी दोनो ही भाषाओं का प्रयोग करते हैं।




महाराजा किशन सिंह से लेकर महाराजा मदन सिंह तक १३ नरेशों के चित्र



श्री राधाकृष्ण

सङ्कलन : महाराजा ब्रजराज सिंह किशनगढ़

# इतिहास-परिचय

मुगलकाल के इतिहास म इस छोटे स राज्य क रणबांकुरे राठौर राजाओ न अदभुत शौय का प्रदशन कर राजपूती आन बान शान को अनवरत निभाया। विषम जलवायु मे जीवन के लिये निरन्तर कठोर सघष करने वाले इन वीर योद्धाओ ने अपन राज्य को सदव सवतत्र स्वतन्त्र रखा। इस राज्य के शासको से मुगल या ब्रिटिश, किसी काल मे भी, कोई कर नही लिया गया। ये तथ्य इनकी राजनतिक कुशलता के परिचायक है।

इस वश की सबसे अधिक विलक्षणता तो यह है कि इसके शासको म वीरत्व के साथ साथ धार्मिकता सरसता एव भावुकता भी भरपूर थी। यह राज्य शास्त्रीय सगीत एव चित्रकला का तो गढ ही रहा है। भारतीय चित्रकला के क्षेत्र मे किशनगढ—चित्रकला (Kishangarh School of Painting) का अपना एक विशेष स्थान है। यदि यह कहा जाये कि इन राजाओ ने अपने आराध्य देव भगवान कृष्ण को साहित्य सगीत एव चित्रकला मे साकार रूप से अवतरित करके अपने राज्य किशनगढ को 'कृष्ण का गढ' बना दिया है तो कोई अतिशयोक्ति नही होगी।

यहाँ के राजा भगवान श्री कल्याण राय जी (भगवान कृष्ण के ही चतुभुज रूप का यह एक नाम है जसे नाथ द्वारा मे भगवान श्री नाथ जी के नाम से कृष्ण की ही मूर्ति विराजमान है) को ही किशनगढ राज्य का वास्तविक शासक और स्वय को भगवान का दीवान मानते रहे हैं।

# इतिहास

## महाराजा किशन सिंह

*(विक्रमी सम्वत १६६२)*

### राज्य की स्थापना

किशनगढ़ राज्य के संस्थापक महाराजा किशन सिंह का जन्म विक्रमी सम्वत १६३२ में कार्तिक वदी अष्टमी को जोधपुर में हुआ था। यह जोधपुर के महाराजा उदय सिंह के पुत्र थे।

यह भारतीय इतिहास के मध्य कालीन युग का वह समय था, जब भारत में मुगल साम्राज्य की नींव जम चुकी थी। अकबर भारत का सम्राट था, जिसने कूटनीति के द्वारा राजपूतों को अपना प्रबल समर्थक बना लिया था क्योंकि वह भली भांति जानता था कि इस वीर जाति को अपने विश्वास में लिये बिना मुगल साम्राज्य कभी भी स्थायित्व प्राप्त नहीं कर सकता।

यह तलवार का युग था। अकबर के कूटनीतिक जाल में फँस कर भी राजपूतों में ओज था वीरत्व था और बाहुबल था। उनके इन्हीं गुणों का अकबर और उसके उत्तराधिकारियों ने समुचित लाभ उठाया।

किशन सिंह अपने बड़े भाइयों में छोटे होने के कारण जोधपुर राज्य के उत्तराधिकारी नहीं हो सकते थे, किन्तु वह वीर पुरुषार्थी एवं महत्वाकांक्षी व्यक्ति थे। एक वीर राजपूत की भांति उनकी धारणा थी कि राजपूत का वास्तविक राज्य तो उसकी तलवार और उसका पुरुषार्थ है अतः अपने कुछ चुने हुए साथियों को लेकर वह जोधपुर से निकल पड़े और अजमेर पहुँचे।

वहा के शासक द्वारा जब अकबर को इस वीर राजपूत युवक की प्रतिभा का पता चला तो उसने इन्हे सम्मान पूर्वक अपने पास बुलाकर हिण्डौन क्षेत्र का शासक बना दिया और राजा की पदवी से विभूषित किया।



किशनगढ़ का किला

राजा किशन सिंह अकबर के जीवन काल तक हिण्डौन के शासक बने रहे किन्तु उनके स्वाभिमान को यह रुचिकर न लगा कि वह किसी के द्वारा दिये गये राज्य पर आजीवन राज्य करते रहते। उन्हे अपने बाहुबल पर भरोसा था इसलिए अकबर की मृत्यु के उपरान्त जब जहाँगीर को राज सिंहासन प्राप्त हुआ तो विक्रमी सम्वत १६६२ में ये हिन्डौन छोड कर चले आये और वर्तमान किशनगढ़ के पास ही सेठोलाव स्थान को जीत कर अपनी निजी जागीर की स्थापना की और वहीं बस गये।

विक्रमी सम्वत १६६८ की माघ सुदी पंचमी को इन्होंने गुन्दोलाव झील के सुरम्य तट पर, पहाड़ियों के मध्य मनमोहक वातावरण में वर्तमान किशनगढ़ नगर की स्थापना की और इसे अपनी राजधानी बनाया।

जहाँगीर भी अपने पिता अकबर की भाँति ही इनके पुरुषार्थ से प्रभावित था। उसके पिता ने तो इन्हें केवल राजा की ही पदवी दी थी किन्तु उसने इन्हें महाराजा की पदवी से विभूषित कर तथा तीन हजारी जात और दो हजारी सवारों का मनसब प्रदान कर इनका और अधिक सम्मान किया।

इनके वीरत्व के विषय में बहुत सी कहानियाँ प्रसिद्ध हैं। विक्रमी सम्वत १६७२ में ज्येष्ठ सुदी दूज को कराल काल के प्रबल झोंके ने, केवल ४० वर्ष की आयु में ही राठौर वंश के इस दीपक को ज्योति बुझा कर भले ही उनके पार्थिव शरीर को पंच तत्व में विलीन करा दिया, किन्तु जब तक इस भूमि पर किशनगढ़ नगर विद्यमान है, वह युग-युगों तक महाराजा किशन सिंह की स्मृति को अमर बनाये रहेगा।

## महाराजा सहस मल्ल

### (विक्रमी सम्वत् १६७२ से १६८५)

महाराजा किशन सिंह के चार पुत्र थे—सबसे ज्येष्ठ सहस मल्ल, द्वितीय जगमाल सिंह, तृतीय भारमल्ल और सबसे कनिष्ठ हरीसिंह। महाराजा किशन सिंह के स्वर्गवासी होने के उपरान्त ज्येष्ठ पुत्र होने के नाते सहस मल्ल राज्य के उत्तराधिकारी हुए।

सहस मल्ल का जन्म विक्रमी सम्वत १६५५ में श्रावण सुदी दूज को हुआ था। अपने पिता की मृत्यु के पश्चात् विक्रमी सम्वत १६७२ में असोज सुदी तीज को केवल १७ वर्ष की आयु में ही यह राज सिंहासन पर बैठे। किन्तु

तुलसी जस भवितव्यता, तैसी मिले सहाय।
आपु न आवे ताहि पे, ताहि तहाँ ले जाय॥

महाराजा सहस मल्ल विक्रमी सम्वत १६८५ में दक्षिण भारत के एक नगर जाफराबाद गये हुए थे। वहाँ उन्हें विषम ज्वर हो गया। उनकी इस रुग्णता की सूचना किशनगढ़ भेजी गई। सूचना पाते ही छोटी रानी सिसोदिनी जाफराबाद को चल दी। किन्तु विधि के विधान को कौन जानता था। रानी के जाफराबाद पहुँचने के कुछ क्षण पहले ही सब कुछ समाप्त हो चुका था। उनका प्रियतम इस संसार से विदा हो गया था। रानी सिसोदिनी ने सती प्रथा के अनुसार अपने पति के पार्थिव शरीर के साथ ही अपने शरीर को भी चिता की ज्वाला में भस्मीभूत कर दिया।

जब किशनगढ़ में महाराजा सहस मल्ल के स्वर्गवास और रानी सिसोदिनी के सती हो जाने का दुःखद समाचार पहुँचा तो बड़ी महारानी हाडी जी ने भी एक चिता तैयार कराई तथा अपने दिव्य शरीर को उसकी ज्वाला में समर्पित कर महासती हो गई।

ऐसी मान्यता है कि जो रानी अपने पति के पार्थिव शरीर के साथ सती होती है वह सती कहलाती है किन्तु जो पति के शरीर के बिना ही सती हो जाती है वह महासती कहलाती है। महारानी हाडी ने अपने मन में दृढ़ संकल्प [illegible] 'महा[illegible]' को समाधि में [illegible] [illegible] भी [illegible] रखा। जीवन [illegible] में [illegible] रानी [illegible] बड़ी महारानी थी [illegible] सती होने के उपरान्त [illegible] महासती रहा।

## महाराजा जगमाल सिंह
### (विक्रमी सम्वत् १८८५)

महाराजा महेश दास के कोई सन्तान नहीं थी अतः उनकी मृत्यु के पश्चात उनके छोटे भाई जगमाल सिंह विक्रमी सम्वत १८८५ में राज सिंहासन पर बैठे। इनका जन्म विक्रमी सम्वत १६५७ की ज्येष्ठ सुदी सप्तमी को हुआ था।

गद्दी पर बैठने के कुछ ही दिनों बाद वे अपने छोटे भाई भारमल के साथ जाफराबाद गये। वहाँ एक राजपूत युवक इनके पास शरण माँगने आया। अपने प्राणों की बाजी लगा कर भी शरणागत की रक्षा करना भारतीय क्षत्रियत्व की परम्परा रही है। महाराजा जगमाल सिंह ने भी उस परम्परा को निभाया और उसे अपनी शरण में रख लिया।

सयोग की बात, वह राजपूत दक्षिण के नवाब अमानुल्ला के यहाँ कोई अपराध करके आया था। जब नवाब को पता चला कि उसका अपराधी महाराजा जगमाल सिंह के पास है तो उसने एक दूत भेज कर इनसे कहलवाया, "उस अपराधी व्यक्ति को हमारे अधिकार में दे दिया जाये।

महाराजा जगमाल सिंह ने स्पष्ट उत्तर दे दिया 'वह हमारी शरण में आ चुका है। हम उसे किसी भी मूल्य पर किसी के अधिकार में नहीं दे सकते। उसकी रक्षा करना हमारा धर्म है।

नवाब इस उत्तर से सतुष्ट ही कैसे होता? नवाब की जिद थी कि वह अपराधी को अपने अधिकार में लेकर रहेगा इधर महाराजा की हठ थी, क्षत्रिय धर्म का पालन होगा। शरणागत की रक्षा की जायेगी।

अन्ततोगत्वा महाराजा जगमाल सिंह और नवाब अमानुल्ला के बीच भयानक युद्ध छिड़ गया। नवाब की ओर से नवाब का पुत्र युद्ध का सचालन कर

रहा था। घमासान युद्ध हुआ। कोई भी पक्ष झुकने को तैयार न था। अन्त मे महाराजा की विजय हुई। महाराजा जगमाल सिंह ने नवाब के लडके का निशान छीन लिया और उसकी सेना को युद्ध स्थल से मार भगाया।

इसमे सदेह नही कि क्षत्रिय परम्परा का पूर्ण रूपेण पालन किया गया था और विजय श्री महाराजा जगमाल सिंह को ही प्राप्त हुई थी, किन्तु वे इस युद्ध मे इतने गम्भीर रूप से घायल हो चुके थे कि उसी माघ सुदी द्वादशी को उनका स्वर्गवास हो गया। इनके साथ ही इनके छोटे भाइ भारमल्ल भी बहुत घायल हुए थे उनका भी वहीं प्राणान्त हो गया।

इसे दवीप्रकोप ही कहा जा सकता है कि कुछ महीनो के भीतर ही ये तीनो भाई जाफराबाद भूमि की ही गोद मे अनन्त निद्रा मे सो गये।

## महाराजा हरी सिंह

(विक्रमी सम्वत १६८५ से १७०१)

महाराजा जगमाल सिंह को वीर गति प्राप्त हो जाने पर विक्रमी सम्वत् १६८५ मे ही उनके सबसे छोटे भाइ हरी सिंह जी को राज सिंहासन पर बैठा दिया गया।

महाराजा हरी सिंह का जन्म विक्रमी सम्वत् १६६३ मे वैसाख सुदी नवमी को हुआ था। यद्यपि इन्होने राज्य तो १६ वर्ष किया, किन्तु विक्रमी सम्वत् १७०१ मे यह भी निसन्तान ही स्वर्ग सिधार गये।

## महाराजा रूप सिंह

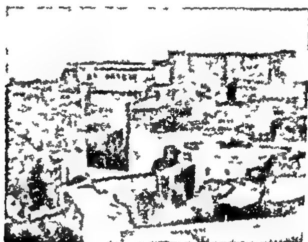
(विक्रमी सम्वत १७०१ से १७१५)

महाराजा हरी सिंह के बाद महाराजा किशन सिंह के वंश मे भारमल्ल के एक मात्र पुत्र रूप सिंह ही बचे थे अतः अपने काका महाराजा हरी सिंह के स्वर्गवामी हो जाने पर विक्रमी सम्वत १७०१ मे इन्हे राज्याधिकार प्राप्त हुआ।

इनका जन्म वैसाख सुदी एकादशी को विक्रम सम्वत १६८५ मे बदरा

नामक स्थान पर हुआ था। महाराजा होने पर भी यह अपनी जन्म भूमि का मोह न छोड़ सके। उन्होंने इसी बवेरा नामक ग्राम में विक्रमी सम्वत् १७०६ में एक विशाल किला बनवाया तथा रूपनगढ़ नगर जिसे रूप नगर भी कहते हैं बसाया। यह नगर किशन गढ़ से १६ मील की दूरी पर है।

महाराजा रूप सिंह, किशन गढ़ राज्य के अत्यन्त तेजस्वी वीर और कुशल राजनीतिज्ञ हुये हैं जिनके व्यक्तित्व ने तत्कालीन मुगल सम्राट शाहजहाँ को भी अत्यधिक प्रभावित किया था। दिल्ली दरबार में इन्हें विशेष स्थान प्राप्त था।



रूपन गढ़ का किला

विक्रमी सम्वत् १७०१ माघ सुदी सप्तमी को शाहजहाँ ने रूप सिंह जी का मनसब बढ़ा कर एक हजारी जात और सात सौ सवारों का किया था। मनसब का बढ़ाये हुए अभी एक वर्ष भी पूरा नहीं हो पाया था कि विक्रमी सम्वत् १७०२ की पौष बदी चौथ को बादशाह ने उन्हें एक हजारी जात और एक हजार सवारों का मनसब प्रदान कर अपने शहजादे मुराद के साथ बलख —बदख्शा के बादशाह नजर मुहम्मद खाँ से युद्ध करने के लिए भेज दिया। इस युद्ध में इन्होंने बड़ी वीरता दिखाई जिससे प्रभावित हो कर बादशाह शाहजहाँ ने विक्रम सम्वत् १७०३ की प्रथम श्रावण सुदी दशमी को इनका मनसब डेढ़ हजारी जात और एक हजार सवारों का कर दिया।

कदाचित् बादशाह ने इनकी वीरता को देखते हुये श्रावण सुदी दशमी को दिया गया मनसब कम समझा, इसीलिये केवल दो महीने पश्चात ही इनका मनसब बढा कर दो हजारी जात और एक हजार सवारा का कर दिया। इस समय यह बादशाह की ओर से बलख रक्षाधिकारी नियुक्त थे। बादशाह ने इन्हे विशेष सम्मान देने के लिए एक बढ़िया घोडा इनकी भेंट में भेजा।

बलख म इनके शौर्य और अदम्य साहस के सम्मुख विद्रोही व आतक वादी पठान टिक न सके। इन्होने उनका पूणत दमन कर दिया।

किशन गढ राज्य का ध्वज, श्याम-सुन्दर लाल रूप सिंह जी न इसी समय पठानो से छीना था तथा इस विजय की स्मृति स्वरूप उसी दिन से इस ध्वज को अपने राज्य का ध्वज बनाया था।

बादशाह शाहजहा को महाराजा रूप सिंह के साहस एव वीरता पर इतना अधिक विश्वास था कि विद्रोहियो का सिर कुचलने के लिय वह इनसे अधिक उपयुक्त किसी दूसरे व्यक्ति को नही समझता था। इसलिए पश्चिमोत्तर सीमा के खूँखार पठानो एव ईरानियो का दमन करने के लिए बार बार इन्हें ही भेजा जाता था।

विक्रमी सम्वत १७०५ मे शाहजहाँ ने इनका मनसब बढा कर ढाई हजार जात और बारह सौ सवारो का कर दिया तथा इन्हे ईरानियो का दमन करने के लिए शाहजादे औरगजेब के साथ कधार भेजा।

महाराजा रूप सिंह ने ईरानियो को कुचल देने म जो वीरता दिखलाई। उससे प्रसन्न होकर बादशाह ने इनका मनसब तीन हजारा जात और डेढ हजार सवारो का कर दिया।

विक्रमी सम्वत् १७०९ म ईरानियो ने पुन मुगल शासक के विरुद्ध प्रबल विद्रोह किया, किन्तु वीरवर रूप सिंह जी के वहाँ पहुँचने ही विद्रोह शान्त हो गया, इसके फल स्वरूप शाहजहाँ न इनका मनसब चार हजारी जात और दो हजार सवारो का कर दिया।

विक्रमी सम्वत् १७१० म एक बार फिर कधार म विद्रोह उठ खडा हुआ। इस बार रूप सिंह जी ने ईरानियो का ऐसा दमन किया कि वे फिर उनके जीते जी मुगल साम्राज्य के विरुद्ध सिर नही उठा सके। शाहजहाँ ने वीरवर रूप सिंह जी के इस काय से प्रसन्न होकर उन्हे चार हजारी जात और ढाई हजार सवारो का मना नायकत्व (मनसब) प्रदान किया।

विक्रमी सम्वत् १७११ मे इन्हे सादुल्ला खाँ वजीर के साथ चित्तौड पर

आक्रमण करने के लिए भेजा गया। 'गजटियर आफ इण्डिया' म इस घटना का उल्लेख करते हुए लिखा गया है कि रूप सिंह जी की वीरता से ही बादशाह चित्तौड़ पर अधिकार करने म समर्थ हो सका। इसके फलस्वरूप बादशाह ने इन्हें चार हजारी जात और चार हजार सवारों का सेना नायकत्व प्रदान किया।

इन्हीं दिनों रूप सिंह जी किशनगढ़ के समीप खोर्ऩी नामक स्थान पर बड़ा भारी किला बनवा रहे थे। यद्यपि बादशाह शाहजहाँ इनके वीरतापूर्ण कार्यों से प्रसन्न होकर इनके पद म वृद्धि करते हुए इनके सम्मान को बढ़ा रहा था, किन्तु इस प्रकार इनके व्यक्तित्व को निरन्तर बढ़ते हुए देखकर वह मन ही मन कुछ घबराने भी लगा था। इसम सदेह नहीं यदि रूप सिंह अपनी योजना के अनुसार खोड़ा गणेश नामक स्थान पर किला बनवा लेते तो अजमेर के तारागढ़ की बादशाही रक्षा-व्यवस्था सदैव के लिए समाप्त हो जाती। अत शाहजहाँ ने किसी प्रकार उन्हें इस बात पर सहमत कर लिया कि वह खोर्ऩी म किला न बनवायें। उसने इनको सन्तुष्ट करने के लिए मेवाड़ का पुर मांडल इनको जागीर म दे दिया। बाद म यह पुर मांडल महाराणा सज्जन सिंह को दहेज म लौटा दिया गया था।

इस प्रकार रूप सिंह जी ने अपनी वीरता से किशन गढ़ राज्य का सम्मान और वैभव खूब बढ़ाया। वह केवल वीर और रण कुशल ही रहे हों ऐसी बात नहीं थी, वरन यह बहुत बड़े कूटनीतिज्ञ भी थे। मुगल दरबार म इन्हें विशेष सम्मान प्राप्त था तथा यह मुगल शाही के नीति नियन्ता एव कुशल सचालक थे।

उदारमना शहजादे दारा शिकोह के यह सबसे बड़े पक्षपाती थे और उसे ही शाहजहाँ का उत्तराधिकारी बनाना चाहते थे, इसलिए शाहजहाँ ने इन्हें दारा शिकोह का सरक्षक नियुक्त किया था।

मुगल साम्राज्य के उत्तराधिकार के लिए दारा शिकोह और औरंगजेब के बीच हुए युद्ध म दारा के सबसे बड़े पाठ मद रूप सिंह ही थे। यदि विधाता इनके लिए थोड़ा भी अनुकूल हुआ होता तो रूप सिंह जी ने अपनी तलवार से भारत का दूसरा ही इतिहास लिख दिया होता।

इस युद्ध म दारा शिकोह और औरंगजेब की सेनाएँ एक दूसरे म भिड़ रही थीं। रूप सिंह जी दारा शिकोह की सेना के अग्रिम दल के नायक थे। यह अकेले ही औरंगजेब के अग्रिम दल को अपनी तलवार से चीरते हुए औरंगजेब के हाथी के समक्ष पहुँच गए और तत्काल ही इन्होंने उसके हाथी

की अम्बारिका का रस्सा काट डाला। औरंगजेब हाथी से गिरने लगा। वह रूप सिंह जी का अदम्य साहस देख कर हतप्रभ रह गया। इतने में ही औरंगजेब के दूसरे दल ने आकर रूप सिंह जी को घेर लिया और उन पर भीषण प्रहार होने लगे। अकेले रूप सिंह जी ने रौद्र रूप धारण कर शत्रुओं से घमासान युद्ध किया और अंत में अपनी तलवार से बीसियों शत्रुओं को मौत के घाट उतार कर स्वयं भी धरती माता की गोद में सो गए। इस प्रकार विक्रमी सम्वत् १७१५ की ज्येष्ठ शुक्ला अष्टमी को, धौलपुर के निकट युद्ध में रूप सिंह जी ने अनुपम शौर्य प्रदर्शित करते हुए वीर गति पाई।

महाराजा रूप सिंह की कई रानियां थीं। किशन गढ़ में इनकी वीरगति का समाचार पहुंचते ही वे सभी एक साथ सती हो गई।

रूप सिंह जी से बादशाह शाहजहाँ इतना प्रभावित था कि वह इनके मुँह से निकली बात कभी टालता नहीं था। इन्होंने ही बादशाह से कह कर रावल रामचन्द्र को जैसलमेर से पद च्युत करवाया था और वहां का राज्य अपने पिता के ममेरे भाई भाटी सबलसिंह को दिलवाया था।

रूप सिंह जी ने वीरत्व एवं राजनैतिक कुशलता के साथ साथ, भावुक हृदय भी पाया था। यह भगवान श्री कृष्ण के अनन्य भक्त एवं उच्च कोटि के कवि भी थे। इनके पद बड़े भावपूर्ण एवं भक्ति रस की अविरल धारा प्रवाहित करने वाले हैं।

वृन्दावन से भगवान कल्याण राय की मूर्ति भी रूप सिंह जी ही लाये थे जिसे इन्होंने पहले माडलगढ़ और बाद में रूपनगढ़ के किले में स्थापित किया। वह मूर्ति आजकल किशन गढ़ के किले में विराजमान है।

महाप्रभु वल्लभाचार्य का एक मात्र प्राचीन चित्र, जो सिकन्दर लोदी का बनवाया हुआ था, इन्होंने ही शाहजहां से प्राप्त किया था। वह चित्र किशनगढ़ किले के भीतर भगवान कल्याण राय के मंदिर में आज भी विद्यमान है।

इस प्रकार रूप सिंह जी किशनगढ़ के महान नृप थे। उनके विषय में जितना भी लिखा जाये उतना कम है। वे किशनगढ़ के राजवंश में अनोखी प्रतिभा लेकर जन्मे थे। उनके महान व्यक्तित्व ने ही किशनगढ़ को भारत-व्यापी गौरव प्रदान कराया था।

## राजकुमारी चारुमती

महाराजा रूप सिंह के महान व्यक्तित्व से औरंगजेब मन ही मन द्वेष रखता

था, किन्तु शाहजहाँ के बादशाह रहते हुए वह उनके विरुद्ध कुछ कर नहीं सका। जब उसने अपने बड़े भाई दारा शिकोह की हत्या कर अपने पिता शाहजहाँ को बन्दी बना लिया और स्वयं भारत का सम्राट बन बैठा, तब उसने अपने विरोधियों को चुन चुन कर उनसे बदला लिया।

चारुमती (उपनाम चंचल कुमारी) महाराजा रूप सिंह की अत्यंत रूपवती कन्या थी। उसके अनुपम सौन्दर्य की चर्चा राजपूताने के बाहर भी फैल चुकी थी। कहते हैं, एक दिन एक चित्र बेचने वाली रूपनगढ़ के किले में आई। उसके पास उस समय के लगभग सभी प्रसिद्ध योद्धाओं के चित्र थे। उसने वे चित्र चंचलकुमारी को दिखलाये। ऐसे ही मेवाड़ के महाराणा राज सिंह का चित्र चंचल कुमारी के हाथ में आया उसने उस चित्र को बड़े स्नेह की दृष्टि से देखा और अपने हृदय से लगा लिया।

चित्र बेचने वाली ने उसे बादशाह आलमगीर (औरंगजेब) का चित्र दिखलाकर महाराणा राज सिंह को तुलना में बादशाह की प्रशंसा करना आरम्भ कर दिया। उसकी बातों से चंचल कुमारी क्रोध में भर गई। उसने औरंगजेब के चित्र को धरती पर फेंक कर उस पर थूक दिया और चित्र बेचने वाली को किले से बाहर निकलवा दिया।

अपमानित होकर चित्र बेचने वाली दिल्ली के शाही रनिवास में पहुँची और चंचल कुमारी द्वारा किये गये बादशाह के अपमान को अतिरंजित करके सुनाया, अतः औरंगजेब को रूप सिंह जी के प्रति वमनस्यता का प्रतिशोध उनके वंश से लेने का अवसर प्राप्त हो गया और उसने एक विशाल सेना लेकर रूपनगढ़ पर आक्रमण कर दिया।

कुछ इतिहासकार इस आक्रमण में औरंगजेब का होना नहीं मानते, किन्तु विक्रमी सम्वत् १७१६ में मुगल सेना का रूपनगढ़ पर आक्रमण हुआ यह ऐतिहासिक तथ्य है।

रूप सिंह जी के पुत्र महाराजा मानसिंह उस समय केवल चार वर्ष के बालक ही थे। इस आक्रमण के रूप में किशनगढ़ राज्य पर घोर विपत्ति के बादल मंडरा उठे। कुछ कायरों ने तो यहाँ तक सुझाव दिया कि चंचल कुमारी का डोला देकर रूपनगढ़ की रक्षा की जावे।

चंचल कुमारी अपना हृदय मन ही मन मेवाड़ के महाराणा राज सिंह को अर्पित कर उन्हें अपना पति स्वीकार कर चुकी थी। उस सुकुमारी ने एक क्षत्रिय बाला की भाँति ही साहस से काम लिया तथा एक पत्र महाराणा को

लिख कर रूपनगढ़ की रक्षा व अपनी लाज बचाने के लिए उनसे विनम्र निवेदन किया।

जैसे ही महाराणा राजसिंह को दूत के द्वारा चंचल कुमारी का पत्र मिला उन्होंने अपने वीर मनानी सरदार चूडावत को विशाल शाही सेना से टक्कर लेने के लिए भेजा।

सरदार चूडावत का एक दिन पहले ही गौना होकर आया था। महाराणा का आदेश पाकर वह अपनी नव विवाहिता पत्नी हाडी रानी से युद्ध स्थल में जाने की विदा मांगने आया। स्वाभाविक ही सौंदर्यमयी सुकुमार प्रियतमा के चन्द्रानन को देखकर युवा सरदार के हृदय में मोह उत्पन्न हुआ। उसने पत्नी के मेहंदी लगे हाथों को अपने हाथों में लेकर कहा "प्रिये मैं क्षत्रिय धर्म के अनुसार अपना कर्त्तव्य पालन करने जा रहा हूँ। तुम भी अपना कर्त्तव्य पालन करना।

हाडी रानी ने एक वीर क्षत्राणी की भांति पति को उत्तर दिया, 'तुम अपना कर्त्तव्य पालन करो। समय आने पर मैं भी अपना कर्त्तव्य पालन करूंगी।' और उसने बडी प्रसन्नतापूर्वक सरदार को युद्ध के लिए विदा किया।

सरदार चूडावत के हृदय में एक शंका सी उठ रही थी—कर्त्तव्य उसे युद्ध स्थल की ओर ले जा रहा था, किन्तु मन प्रियतमा के मोह में उलझा हुआ था। उसने कूच करने से पहले एक दासी द्वारा फिर हाडी रानी को कहलवाया कि वह अपने कर्त्तव्य पर दृढ रहे।

इस संदेह से हाडी रानी समझ गई कि उसका पति उसके मोह पाश में बंधा हुआ है, इसलिए वह युद्ध क्षेत्र में सही रूप से अपना कर्त्तव्य पालन न कर सकेगा। उसने दासी से कहा 'मैं तुझे एक भेंट देती हूँ वह ले जाकर सरदार को दे आना।' थोडी देर में दासी ने देखा—हाडी रानी के एक हाथ में थाल था और दूसरे हाथ में तलवार। हाडी रानी ने अपना शीश काट कर उस थाल में रख दिया था।

प्रियतमा का कटा सिर देखते ही सरदार चूडावत का रूप रौद्र हो उठा। उसने सिर की केश राशि को दो भागों में विभक्त करके उसे मुण्डमाल के रूप में अपने गले में धारण कर लिया और फिर उसकी तलवार काल बन कर शत्रु दल पर टूट पडी। राजपूत वीरों ने शाही सेना के छक्के छुडा दिये। औरंगजेब को मुँह की खानी पडी।

इतिहास प्रसिद्ध यह भीषण युद्ध जहाँ हुआ था, वह स्थान किशनगढ—

रूपनगढ़ मार्ग पर, किशन गढ़ से ६ मील दूर, आज भी (घृत+हाली) घातोली ग्राम में नाम से अवस्थित है और एक बाला की लाज रक्षा के लिए दूसरी वीर ललना का अनुपम बलिदान एवं राजपूतों के स्वाभिमानी शौर्य की याद दिला रहा है।

इस युद्ध में सरदार चूण्डावत अपने अन्य साथियों सहित वीरगति को प्राप्त हुए। चंचल कुमारी का विवाह महाराणा राज सिंह के साथ हो गया तथा महाराणा को मांडल गढ दहेज में दे दिया गया।

## महाराजा मान सिंह

(विक्रमी सम्वत् १७१५ से १७६३)

महाराजा मान सिंह का जन्म भादो सुदी तीज को विक्रमी सम्वत् १७१२ में मेवाड़ के मांडल गढ नामक ग्राम में हुआ था। महाराजा रूप सिंह के यह एक मात्र पुत्र थे अतः अपने पिता की वीर गति के उपरान्त केवल तीन वर्ष की आयु में ही विक्रमी सम्वत् १७१५ में इनका राज तिलक हो गया। इनके गद्दी पर बैठते ही औरंगजेब ने इनका मनसब घटाकर केवल तीन हजारी जात कर दिया। इनके बाल्यकाल में राज्य कार्य इनकी दादी श्रीमती कछवाही जी व माँजी चौहान जी की आज्ञानुसार राठौर करण जी करते रहे। जोधपुर के महाराजा जसवन्त सिंह जी जब रूप सिंह जी की मातमी के लिए रूपनगढ आये तो राज प्रबन्ध में सहायता करने के लिए अपने विश्वास पात्र नाजिर समीप राम को यहां छोड़ गए थे।

देर भले ही हो जाय, किन्तु गुणी व्यक्ति के गुणों का उचित सम्मान विरोधियों को भी करना पड़ता है। महाराजा मान सिंह भी ऐसे ही प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति थे। जो औरंगजेब इनके पिता महाराजा रूप सिंह का शत्रु था उसने भी केवल १५ वर्ष के बालक मानसिंह के गुणों को पहिचान लिया और विक्रमी सम्वत् १७२७ में उसने इन्हें १२ परगने जागीर में दिये तथा शहजादे मुअज्जम के साथ इनको बंगाल भेजा।

बंगाल में इन्होंने मकसूदाबाद के जिले में मानसिंह पुरा, राजमहल व अकबर नगर नामक तीन पुर बसाये। बढ़ते बढ़ते बंगाल में १० लाख रुपये वार्षिक आय की जागीर इनके पास हो गई और शहजादा मुअज्जम ने इधर

का सारा राज्याधिकार इनको देकर अपने शहज़ादे अज़ीम का इन्हें संरक्षक बना दिया। महाराजा मानसिंह ने इस उत्तरदायित्व को पूरी तल्लीनता से निभाया और उचित रीति से शहज़ादे का मार्गदर्शन किया।

बाद में यह पंजाब, औरंगाबाद, काबुल आदि मोर्चों पर बादशाह की ओर से गए और भारी वीरता का प्रदर्शन कर सफलता प्राप्त की।

महाराजा मानसिंह वल्लभ कुल सम्प्रदाय में दीक्षित परम भगवदीय वैष्णव थे। जब भगवान गोवर्धन नाथ जी को ब्रज से ले जाकर नाथद्वारा में पधराया गया, तब इन्होंने मार्ग में किशनगढ़ के समीप पीताम्बर की गाल में भगवान को पूर्ण भक्ति सहित विराजमान करवाया था और विधिवत् उनकी पूजा की थी।

ये एक अच्छे साहित्यकार और कवि भी थे। इन्होंने 'सम्प्रदाय कल्पद्रुम' नामक एक ग्रन्थ की रचना की जो पुष्टि मार्ग का प्रामाणिक ग्रन्थ माना जाता है। प्रसिद्ध कवि वृन्द जी को यही आगरा से यहां लाये थे।

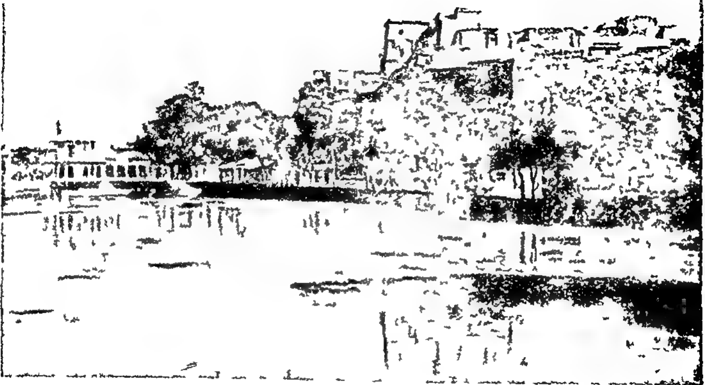
विक्रमी सम्वत् १७६७ में कार्तिक कृष्णा दशमी को पाटण नामक स्थान पर इनका देवलोक वास हुआ।

## महाराजा राज सिंह

*(विक्रमी सम्वत् १७६७ से १८०५)*

महाराजा राजसिंह का जन्म कार्तिक सुदी द्वादशी को विक्रमी सम्वत १७३१ में हुआ था। यह छोटी उम्र में ही अपने पिता मानसिंह के साथ शाही दरबार में आने जाने लगे। बादशाह औरंगजेब इनकी प्रतिभा से इतना प्रभावित हुआ कि उसने १० वर्ष की अल्प आयु में ही इन्हें २०० सवारों का मनसब प्रदान कर दिया था, जो बढ़ते बढ़ते सम्वत १७६१ तक ७०० जात और ३०० सवारों का हो गया था। विक्रमी सम्वत १७६७ में मानसिंह के स्वर्गवास होने के पश्चात कार्तिक सुदी छठ को इन्हें राजसिंहासन प्राप्त हुआ।

औरंगजेब की मृत्यु के बाद उसके बेटे मुअज्ज़म और आज़म में राजसिंहासन प्राप्त करने के लिए युद्ध हुआ। इन्होंने मुअज्ज़म की ओर से युद्ध में भाग लेकर विजय श्री प्राप्त की। इस युद्ध में इनके शरीर में १६ घाव लगे थे। सारे कपड़े रक्त रंजित हो गए थे। ये कपड़े किशन गढ़ दरबार के खज़ाने



गुन्दोलाव झील के तट पर स्थित फूल महल और किशनगढ़ का किला

म अब तक सुरक्षित हैं और दशहरे के दिन इनकी राजकीय पूजा की जाती है।

जब ये स्वस्थ हो कर बादशाह के पास गये तब बादशाह ने इनका बड़ा सम्मान किया तथा इन्हे उम्दये राजहाय बुलन्द मकान महाराजाधिराज महाराजा बहादुर की उपाधि से विभूषित करके सरवाड व मालपुरा के परगने भी इनकी जागीर मे दे दिये। विक्रमी सम्वत १७७३ मे इनका मनसब ५ हजारी जात का हो गया, जो बाद मे बढ कर ६ हजारी हुआ। विक्रमी सम्वत १७७७ मे इन्हे सात हजारी जात का सेना नायकत्व प्रदान किया गया।

ये अच्छे साहित्यकार भी थे। इन्होने कई ग्रन्थो की रचना की तथा कुछ मुक्तक पद भी बनाये। किशनगढ की चित्रकला को विशेषता प्रदान कराने मे इनका बहुत बड़ा योग है।

सिंह का आखेट करने मे इनकी बडी रुचि थी तथा अनेक सिंह इनके द्वारा मौत के घाट उतर चुके थे। विक्रमी सम्वत १८०५ की वैसाख कृष्णा सप्तमी को रूपनगढ मे इनका स्वर्गवास हो गया।

इनके दो रानियाँ थी, जिनके नाम चतुर कुँवरी व ब्रज कुँवरी थे। सुखसिंह फतेहसिंह सावन्तसिंह बहादुरसिंह और वीरसिंह पाँच पुत्र थे। सुखसिंह व फतहसिंह अपने बाल्यकाल मे ही मर चुके थे, अतः इनके स्वर्गवास के बाद इनके तृतीय पुत्र सावन्तसिंह ही रूपनगढ किशनगढ के राज्य सिंहासन पर बैठे।

## महाराजा सावन्त सिंह

*(विक्रमी सवत् १८०५ से १८०६)*

महाराजा सावन्त सिंह का जन्म विक्रमी सम्वत् १७५६ मे पौष सुदी द्वादशी को हुआ था। यह बचपन से ही बडे पराक्रमी थे। विक्रमी सम्वत १७६६ मे जब यह केवल १० वर्ष के बालक ही थे, तब इन्होने एक खूँखार हाथी को, जो महावतो के भी अधिकार से बाहर हो गया था अपनी तलवार के वार से भगा दिया था। विक्रमी सम्वत १७७४ मे इन्होने थूण नामक स्थान को जीत कर अपने राज्य मे मिला लिया था।

एक बार ये दिल्ली के शाही दरबार की महफिल मे बैठे हुए थे तो न जाने कहाँ से एक काला सर्प आकर चुपके से इनके जामे मे घुस गया। इन्हान

भर पुष्टि मार्गीय मर्यादानुसार राधा कृष्ण का ही गुण गान करते रहे।

सावन्त सिंह कवि भी थे। भक्ति इनकी नस-नस में प्रवाहित थी। कविता उसी के प्रकाशन का माध्यम बनी। इनकी गणना हिन्दी के महान कवियों में की जाती है। कविता में यह अपना नाम नागरी दास रखते थे। इन्होंने छोटे बड़े कुल मिला कर २६४ काव्य ग्रन्थों की रचना की है। वे सभी ग्रन्थ कृष्ण भक्ति से ओत प्रोत हैं और हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि समझे जाते हैं।

किशनगढ़ चित्रकला के क्षेत्र में भी इनका अनुपम योग है। इनके द्वारा रचित पदों कवित्तों एवं सवयों आदि पर बनाये गये अनुपम चित्रों ने किशनगढ़ चित्र कला (Kishangarh School of Painting) को चार चाँद लगा दिए। किशनगढ़ राज्य की चित्रशाला में इन चित्रों का संकलन है जो आज विदेशों तक में किशनगढ़ राज्य का ही नहीं भारत का गौरव माने जाते हैं।

ये फारसी के भी उत्कृष्ट विद्वान थे। फारसी निष्ठ भाषा में भी इनका काव्य पाया जाता है। वह भी अनूठा एवं अद्वितीय है।

किशनगढ़ नगर में इन्होंने आम खास व फूल महल आदि सुन्दर इमारतें बनवाई। रूपनगढ़ का पक्का कोट भी इनके ही समय में बनाया गया। सम्वत १८२१ में भाद्र सुदी पंचमी को यह वृन्दावन में ही गोलोक वासी हुए। वहाँ इनके स्मारक के रूप में एक सुन्दर छतरी बनी हुई है जो नागरी दास की छतरी के नाम से प्रसिद्ध है।

## महाराजा सरदार सिंह

*(विक्रमी सम्वत १८१३ से १८२४)*

महाराजा सरदार सिंह का जन्म सम्वत १७८७ में भादो सुदी दूज को हुआ था। विक्रमी सम्वत १८१३ में आपने अपने काका महाराजा बहादुर सिंह से जो संधि की थी उसके अनुसार किशनगढ़ का राज्य महाराजा बहादुर सिंह को और रूपनगढ़ का राज्य इनके पिता महाराजा सावन्त सिंह को मिला था, किन्तु महाराजा सावन्त सिंह राज काज का सारा कार्य इन्हीं को सौंप कर स्वयं वृन्दावन में ही वास करते रहे। सरदार सिंह जी राज काज स्वयं करते हुए भी रूपनगढ़ का महाराजा अपने पिता को ही मानते थे। विक्रमी सम्वत्

१८२१ म महाराजा सावन्त सिंह के स्वगवासी हो जाने के पश्चात् ही य विधिवत राजगद्दी पर बैठे और रूपनगढ के महाराजा की उपाधि ग्रहण की।

वे केवल तीन वष ही विधिवत राज्य कर पाये थे कि विक्रमी सम्वत १८२४ म बसाख सुदी अमावस्या को स्वग सिधार गय।

इनके अपनी कोई सतान नही थी, इसलिये इन्होंने अपन काका महाराजा बहादुर सिंह के पुत्र बिडद सिंह को गोद ले लिया था। इनके जीवन का अधिकाश समय गह कलह एव आपसी लडाई झगडा म ही व्यतीत हुआ। यह बड सहृदय राजा थे। इनके समय मे चित्रकला की बहुत उन्नति हुई। उस समय जो चित्र बनाये गये थे वे सभी बडी उत्कृष्ट कला के नमूने हैं और केवल रूपनगढ किशनगढ राज्य के ही नहीं, वरन् मध्य कालीन भारतीय चित्र कला के गौरव समझे जात हैं। यह चित्र कला एव सगीत के अतिरिक्त साहित्य म भी विशेष रुचि रखते थे।

## महाराजा बहादुर सिंह

*(विक्रमी सम्वत् १८०६ से १८३८)*

महाराजा बहादुर सिंह का जन्म विक्रमी सम्वत १७६८ मे पौष वदी ११ को हुआ था। किशनगढ राजवश के इतिहास म इनका प्रमुख स्थान समझा जाता है। यह अत्यन्त ही वीर, कुशल प्रशासक एव अपने समय के प्रसिद्ध कूटनीतिज्ञ थ। यह वह समय था, जब भारतीय नरेश आपस म मिल कर नही रहत थे। किन्तु इन्होंने मेल के महत्व को समझा था और वैयक्तिक फूट से अधिक से अधिक बचन का प्रयत्न किया था। यही कारण था कि इन्होंने जोधपुर, जयपुर और उदयपुर के नरेशो के साथ अपने घनिष्ट सम्बन्ध स्थापित किय।

कहा जाता है कि एक बार मरहठो और जयपुर राज्य म किसी बात पर युद्ध आरम्भ हो गया। उस समय इन्होंने ही बीच मे पड कर अपनी सफल कूटनीतिज्ञता के बल पर दोनो पक्षो म सधि करवाई थी। इस सन्धि से किशनगढ राज्य को भी लाखों रुपयो का लाभ हुआ। उसी धन से इन्होने *किशनगढ राज्य की सुरक्षा योजना बनाई। किशनगढ* किले का परकोटा, किले के चारो ओर नहर चौबुर्जा, शहर की सुरक्षा दीवार तथा गुन्दोलाव झील की बहादुरशाही पाल्यिां इन्ही की बनवाई हुई हैं।

इन्होंने सरवाड व फतेहगढ के किलों का भी निर्माण कराया तथा रूपनगढ व करकेडी के किलों को सुदृढ बनाया।

इस प्रकार हम देखते है कि किशनगढ राज्य की सामन्तकालीन सुरक्षात्मक योजना महाराजा बहादुर सिंह की ही देन है।

विक्रमी सम्वत १८३८ की फाल्गुन सुदी तीज को इनका स्वर्गवास हो गया।

## महाराजा बिडद सिंह

*(विक्रमी सम्वत १८३८ से १८४५)*

महाराजा बिडद सिंह का जन्म विक्रमी सम्वत १७९४ में अषाढ बदी १३ को हुआ था। सरदार सिंह जी की मृत्यु के पश्चात विक्रमी सम्वत १८२४ में यह उनके दत्तक पुत्र के रूप में रूपनगढ की राजगद्दी पर बैठे।

इनके राजगद्दी पर बैठने के समय से लेकर इनके पिता बहादुर सिंह जी की मृत्यु तक इनके पिता ही रूपनगढ व किशनगढ दोनों राज्यों का शासन कार्य करते थे। यह तो केवल नाम मात्र के लिये ही रूपनगढ के राजा थे। किन्तु विक्रमी सम्वत १८३८ में अपने पिता की मृत्यु के पश्चात यह रूपनगढ व किशनगढ दोनों राज्यों के वास्तविक अधिकारी हो गये। अतः रूपनगढ व किशनगढ दोनों राज्यों को मिला कर किशनगढ फिर एक राज्य बन गया।

इनके राज्यकाल में इनके छोटे भाई बाघ सिंह ने विद्रोह किया। अन्तत फतेहगढ की जागीर प्रदान करके इन्होंने उन्हें सन्तुष्ट कर दिया।

महाराजा बिडद सिंह के हृदय में बाल्यकाल से ही भगवान कृष्ण की भक्ति बीज रूप से विद्यमान थी। समय पाकर वह बीज अंकुरित हुआ और इनके भावुक हृदय में संसार के प्रति विरक्ति उत्पन्न हो गई। अतः विक्रमी सम्वत १८३९ में यह सब राज पाट छोड कर वृन्दावन चले गये और जीवन पर्यन्त वहां निवास करते रहे। इनकी अनुपस्थिति में इनके पुत्र प्रताप सिंह राज्य की देखभाल करते थे और किशनगढ से इनके खर्चे का प्रबन्ध नियमित रूप से होता रहता था। लगभग १० वर्ष तक वृन्दावन में वास करने के पश्चात विक्रमी सम्वत १८४५ में कार्तिक बदी दशमी को इनका गोलोक वास

हो गया। वृन्दावन में महाराजा सावन्त सिंह (नागरी दास जी) की छतरी के समीप ही इनकी भी छतरी बनी हुई है।

महाराजा विड़द सिंह एक उच्च कोटि के विद्वान् थे। इनका संस्कृत भाषा पर पूर्ण अधिकार था तथा अरबी व फारसी के भी यह पंडित थे। जयदेव कवि के काव्य गीत गोविन्द पर इन्होंने एक टीका लिखी है, जिसकी गिनती उच्च कोटि के साहित्य में की जाती है। ऐसा कहा जाता है कि इस टीका का भावार्थ समझने में बड़े बड़े पंडित भी चकरा जाते हैं।

ये बड़े सरल हृदय एवं उदार प्रकृति के व्यक्ति थे। एक बार इनकी उदारता से खिन्न होकर इनके पिता बहादुर सिंह जी ने इन्हें चेतावनी भी तो इन्होंने बड़ा स्पष्ट उत्तर दिया 'धन तो उदारता से ही स्थिर रहता है।

## महाराजा प्रताप सिंह

(विक्रमी सम्वत् १८४५ से १८५४)

महाराजा प्रताप सिंह का जन्म विक्रमी सम्वत १८१६ में भादों सुदी ११ का हुआ था। यह राज्य की शासन व्यवस्था का कार्य तो अपने दादा बहादुर सिंह और पिता बिड़द सिंह जी के समय से ही करने लग गये थे और बिड़द सिंह जी के वृन्दावन चले जाने पर तो राज्य के शासन की पूरा बागडोर इन्हीं के हाथों में रही थी। वैसे इनका विधिवत राजतिलक विक्रमी सम्वत् १८४५ में इनके पिता की मृत्यु के पश्चात कार्तिक शुक्ल छठ को किया गया था।

इनके राज्य काल में कुछ छोटी मोटी लड़ाइयों के अतिरिक्त कोई उल्लेखनीय घटना नहीं हुई। किशन गढ़ की सुरक्षा दीवार तथा किले की नहर का कार्य जो इनके दादा बहादुर सिंह जी के समय में आरम्भ हुआ था वह इनके राज्य काल में भी चलता रहा।

विक्रमी सम्वत १८५४ की फाल्गुन कृष्ण तीज को अकस्मात ही इनका स्वर्गवास हो गया।

# महाराजा कल्याण सिंह

*(विक्रमी सम्वत १८५४ से १८८६)*

महाराजा कल्याण सिंह का जन्म विक्रमी सम्वत १८५१ में कार्तिक शुक्ला द्वादशी को हुआ था इसलिये जब इनके पिता महाराजा प्रताप सिंह का स्वर्गवास हुआ तो उस समय इनकी आयु केवल ३ वर्ष की ही थी। विक्रमी सम्वत १८५४ की फागुन वदी चौदस को इनका राज्याभिषेक किया गया। इनकी अल्प अवस्था होने के कारण राज्य का शासन प्रबन्ध माता कछवाही जी की आज्ञा के अनुसार होता था।

इनके राज्य काल में किशनगढ़ राज्यभर में बड़ी अशान्ति रही। जागीरदारों ने खूब उपद्रव किये जिन्हें ये सम्भाल नहीं सके, क्योंकि ये तो अपना अधिकांश समय दिल्ली के नाम मात्र के बादशाह अकबर द्वितीय के दरबार में ही काटते थे। बादशाह ने इन्हें मोजे पहिन कर दरबार में आने का अधिकार दिया था। उत्सव आदि के समय में भी इन्हें दरबार में सब से उच्च स्थान दिया जाता था। शहजादा वली अहद इन्हें राजा भाई कह कर पुकारा करता था।

विक्रमी सम्वत १८७४ में इन्होंने ईस्ट इण्डिया कम्पनी से एक सन्धि की, जिसके अनुसार अंग्रेजों ने इन्हें विद्रोही जागीरदारों का दमन करने के लिये, समय समय पर निःशुल्क सहायता देने का वचन दिया। फतेहगढ़ के पूर्वोक्त जागीरदार बाघ सिंह के वंशज स्वतन्त्र हो गये थे। ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने उनका दमन करके उन्हें फिर से किशनगढ़ राज्य के अधीन कर दिया।

राज्य व्यवस्था ठीक करने के लिए कुछ दिनों तक किशनगढ़ में पोलिटिकल एजेन्ट भी रहा। फिर भी जागीरदार पूर्णतः शान्त नहीं हुए। यहां न कहीं विद्रोह की भावना भड़कती ही रही। अन्त में कल्याण सिंह जी दिल्ली छोड़ने को विवश हो गये और उन्हें अजमेर में आ कर रहना पड़ा।

जब ये अजमेर में रह कर भी झगड़ा शान्त करने में सफल न हो सके तब इन्होंने इस कार्य के लिये जोधपुर नरेश से सहायता मांगी। इनकी इस बात से जागीरदार बहुत क्रुद्ध हो गये। उन्होंने इनके पुत्र मोहकमसिंह को राजा घोषित करके किशनगढ़ नगर पर आक्रमण कर दिया।

महाराजा कल्याण सिंह इन नित्य के झगड़ों से तंग आ चुके थे। अन्त में विक्रमी सम्वत १८८९ में इन्होंने जागीरदारों की इच्छानुसार मोहकम सिंह को किशनगढ़ का राजा बनाया और स्वयं दिल्ली चले गये।

राज पाट छोडने के बाद यह लगभग १६ वष तक जीवित रहे, किन्तु न तो फिर कभी किशन गढ गये और न किशन गढ राज्य से अपना कोई सम्बन्ध रखा। विक्रम सम्वत १८६५ मे ज्यष्ठ शुक्ला दशमी को दिल्ली म जमुना के किनारे निगमबोध घाट पद इन्होने अपना शरीर छाड दिया।

नि सदेह इतिहासकार महाराजा कल्याण सिंह की यह आलोचना अवश्य ही करेंगे कि उन्हाने अपन राज्य की उपेक्षा कर दिल्ली के शक्तिहीन बादशाह के दरबार मे रह कर उचित नही किया, किन्तु अकबर द्वितीय और महाराजा कल्याण सिंह के सम्बन्ध इतने घनिष्ट थे कि बादशाह इन्हे पुत्रवत स्नेह करता था और अपने दरबार म सब से अधिक सम्मान देता था। प्रेम की डोर मे ही वह शक्ति है जो मानव की आत्मा व शरीर दोनो को हो अपने बन्धन म जकड लेती है। फिर क्षत्रियत्व का तो यह गुण है कि प्रेम के दो श दो पर अपनी जान भी निछावर कर देता है।

जहाँ तक राज्य और जन भावनाओ का प्रश्न है—जागीरदारो द्वारा मोखम सिंह को राजा घोषित किये जाने पर उन्होने जन भावना के प्रतिकूल जोधपुर या किसी अन्य राज्य स कोई सहायता नही ली और मोखम सिंह के पक्ष म सदव क लिये राज्य से सम्बन्ध तोड कर चल गये। इसे उनके चरित्र की महानता ही कहा जा सकता है।

## महाराजा मोखम सिंह

*(विक्रमी सम्वत १८८९ से १८९८)*

महाराजा मोखम सिंह का जन्म भादा सुदी पचमी को विक्रमी सम्वत् १८७३ म हुआ था। जिस समय इन्हें राज सिंहासन पर बठाया गया, इनकी आयु केवल १६ वष की थी। उस समय राज्य की स्थिति अच्छी नही थी। राज्य भर म अव्यवस्था फैल रही थी। शासन की चूलें ढीली पड चुकी थी। जागीरदारो के हृदय म विद्रोह की भावना घर कर गई थी।

वास्तव मे कुछ जागीरदारों ने इन्ह राज्य गद्दी पर बैठाया ही इस उद्देश्य से था कि यह एक किशोर बालक है उनके हाथ की कठपुतली बन कर रहेगा। वे जसा चाहग, अपने मनोनुकूल काय करते रहग।

किन्तु मोखम सिंह जी ने स्वतन्त्र रूप मे शासन व्यवस्था म सुधार के प्रयास किये। उन्होने जागीरदारो के विद्रोह का कारण जानने और उनका

समाधान करा की भी उचित व्यवस्था की । उन दिनों राज्य में कुछ ऐसे अन उचित कर समाय जाने थे, जो जागीरदारों को पसन्द नहीं थे । इन्होंने उन सभी नये पुराने अनुचित करों को समाप्त कर दिया । उद्दण्ड व्यक्तियों को दण्ड दिया। जिसने विद्रोह के लिये सिर उठाया, उसे वहीं कुचल दिया गया । फिर भी ये राज्य में पूर्ण शान्ति स्थापित नहीं कर पाये । कहीं न कहीं विद्रोही सिर उठाते ही रहते थे । एक विद्रोह को दबा पाने से पहले ही दूसरा विद्रोह उठ खड़ा होता था । विद्रोहियों ने इन्हें एक दिन के लिए भी शान्ति से शासन व्यवस्था नहीं चलाने दी ।

इसी प्रकार की मानसिक अशान्ति के बीच ज्येष्ठ कृष्णा द्वादशी को विक्रमी सम्वत १८९८ में ये नि सन्तान ही परलोक वासी हो गये । मृत्यु से पहले इन्होंने अपना कोई उत्तराधिकारी भी नियुक्त नहीं किया था ।

## महाराजा पृथ्वी सिंह

*(विक्रमी सम्वत् १८९८ से १९३६)*

महाराजा पृथ्वी सिंह का जन्म विक्रमी सम्वत १८९४ में बसाख बदी ५ को हुआ था । चूंकि महाराजा मोखम सिंह ने किशनगढ़ राज्य का कोई उत्तराधिकारी नहीं बनाया था इसलिये उनकी महारानी ने पोलिटिकल एजेन्ट की राय से कचोलिया ग्राम के ठाकुर भीम सिंह के पुत्र पृथ्वी सिंह को गोद लेकर महाराजा मोखम सिंह की मृत्यु के दूसरे दिन ही ज्येष्ठ कृष्णा त्रयोदशी को किशनगढ़ के राज सिंहासन पर बठा दिया ।

इस समय इनकी बालक अवस्था थी । इसलिए शासन प्रबन्ध के लिए एक कौंसिल बनाई गई । इस कौंसिल को राज्य के भीतरी झगड़ों का निपटारा करना पड़ता था । किन्तु ये झगड़े इतनी अधिक सख्या में होते रहते थे कि राज्य में निरन्तर अव्यवस्था ही बनी रहती थी और कौंसिल के सदस्यों तक में मत भेद हो जाता था । अत कौंसिल के स्थान पर दीवान की नियुक्ति की गई । किन्तु वे दीवान (प्रधान मंत्री) भी सफलता न पा सके और समय समय पर नये नये दीवान नियुक्त किये जाते रहे ।

वयस्क होने पर महाराजा पृथ्वी सिंह ने जब शासन व्यवस्था अपने हाथों में ली तो धीरे धीरे सब शान्त हो गया और जनता ने सुख एव शान्ति की सांस ली ।

विक्रमी सम्वत १९१६ म महाराजा प्रताप सिंह की पासवान के पौत्र मोती सिंह न विद्रोह किया जिसे इन्होंने बडी योग्यता से अपने काबू म कर लिया।

महाराजा पृथ्वी सिंह का जोधपुर नरेश महाराजा तख्त सिंह से घनिष्ट सम्बन्ध था। महाराजा जोधपुर कई बार किशन गढ आये थे तथा कई-कई दिन यहाँ रह भी थे। पृथ्वी सिंह का अंग्रेजी शासन म भी बडा सम्मान था। य एक योग्य प्रशासक और कट्टर समाज सुधारक थ। उन दिनो राजपूताने म अफीम खान का बहुत रिवाज था। धीरे धीरे यह व्यसन किशन गढ राज्य म भी बहुत बढ गया। इन्होंने व्यसन के द्वारा प्रजा के स्वास्थ्य एव धन की हानि को समझ कर एक राजाज्ञा द्वारा किशनगढ राज्य की सीमा के भीतर अफीम का सेवन पूर्णत निषेध कर दिया।

इन्होंने ही किशन गढ मे अदालत खफीफा और अदालत दीवानी का काम आरम्भ कराया था। इनके राज्य काल मे ही विक्रम सम्वत १९२५ मे



मोखम विलास

किशन गढ राज्य म रेल की लाइन आई थी। विक्रमी सम्वत १९२७ मे तार व्यवस्था स्थापित हुई और अजमेर तथा जयपुर के बीच तार से संदेश आने-जाने लगे।

इन्होंने गुन्दोलाव झील के बीच में अपने पिता महाराजा मोखम सिंह की स्मृति में मोखम विलास नामक सुन्दर भवन एवं उद्यान का निर्माण भी कराया जो तीन ओर से पानी से घिरा हुआ है।

विक्रमी सम्वत १९३६ में इनका स्वर्गवास हो गया।

## महाराजा शार्दूल सिंह

*(विक्रमी सम्वत १९३६ से १९५७)*

महाराजा पृथ्वी सिंह के तीन पुत्र हुए थे। शार्दूल सिंह, जवान सिंह व रघुनाथ सिंह। अपने पिता की मृत्यु के पश्चात ज्येष्ठ पुत्र होने के नाते शार्दूल सिंह जी को सम्वत १९३६ में पौष वदी नवमी को राज्य का अधिकार प्राप्त हुआ। इनका जन्म विक्रमी सम्वत १९१४ में पौष वदी नवमी को हुआ था।

समय परिवर्तनशील है। समय की गति के साथ सब कुछ बदलता रहता है। जो आज नया है वही कल पुराना हो जाता है। राज्य व्यवस्थायें भी समय समय पर बदलती रही हैं और बदलती रहेगी।

विक्रमी सम्वत १९४२ तक किशनगढ़ राज्य में भी अन्य भारतीय राज्यों की भांति शासन कार्य प्राचीन पद्धति के अनुसार ही होता चला आ रहा था। किन्तु अब सम्पूर्ण भारत में पाश्चात्य सभ्यता का प्रभाव बढ़ रहा था। हर क्षेत्र में नयी नयी नीतियां और पद्धतियां अपनाई जा रही थी। देशी राज्य के नरेश भी इन परिवर्तनों से बच नहीं पा रहे थे। अतः महाराजा शार्दूल सिंह ने भी समय की परिवर्तित गति को पहचाना। इन्होंने राज्य के बाहर से एक कुशल प्रशासक चुनकर अपने यहाँ का दीवान नियुक्त किया तथा पाँच मुसाहिबों की मजलिसकार समिति बना कर किशनगढ़ राज्य के शासन प्रबन्ध में नई परम्परा की नींव डाली। हकूमतों व तहसीलों का कार्य पद्धति में भी पर्याप्त परिवर्तन किये गये। कचहरी और न्यायालयों को नए युग के अनुसार नया रूप दिया गया।

इन्होंने अंग्रेजी सरकार के अनुकरण पर रियासत के भी टिकट व स्टाम्प छपवाए तथा उसी प्रकार से उनके प्रयोग की भी व्यवस्था अपनाई। परन्तु किशनगढ़ नगर में बसने मिन्न का ही अस्पताल था। रियासत का अस्पताल इन्होंने अपने समय में बनवाया। जंगल और पत्थर खान के नये विभाग भी इन्होंने ही स्थापित किये।

इनके समय म ही कल कारखाना का प्रचलन हुआ था। किशनगढ मे भी इन्ही दिना कारखान स्थापित किए गए। सामयज्ञ काटन मिल्स, काटन प्रैस व चमडा घर की स्थापना हुई तथा सोडा वाटर, मक्खन, माजे खस, रेशम लाख व कागज के कारखान खोले गए।

इन्हाने बहुत सी इमारता का भी निर्माण कराया। अपने पुत्र मदनसिंह के नाम पर रेलव स्टशन के समीप मदनगज मडी की स्थापना कराई। गूदो लाव झील के चारो ओर चक्कर दार सडक भी इन्हाने ही बनवाई थी, जिससे इस झील की शोभा को चार चाँद लग गए। शिक्षा के क्षेत्र मे भी इनका बहुत योग दान है—नई-नई पाठशालाएँ खुली। मिडिल तक पढाई की योजना राज्य भर म चालू की गई तथा महाराजा स्कूल का सम्बन्ध इलाहाबाद विश्वविद्यालय स कराया गया।

विक्रमी सम्वत १६२६ मे इस क्षेत्र मे घोर अकाल पडा था। जनता म त्राहि त्राहि मच गई थी। उस समय महाराजा शार्दूल सिंह ने सस्ते भाव पर अनाज उपलब्ध कराने के लिए दूकानें खुलवाइ तथा गरीबा के लिए सदाव्रत लगवाये।

यह बडे धर्मनिष्ठ शासक थे। प्रजा की सुख-सुविधा का सदैव ध्यान रखते थे। जन साधारण की इन तक पहुँच थी। कोई भी व्यक्ति अपने सुख दुख की बात स्वय जा कर इनसे कह सकता था। यह बडे ध्यान से उसकी बात सुनते थे तथा यथोचित सहायता भी करते थे।

विक्रमी सम्वत १६४८ मे ब्रिटिश सरकार ने इन्हे जी० सी० आई० ई० की उपाधि स सम्मानित किया। विक्रमी सम्वत १६५७ की भादो वदी अष्टमी का यह परलोक वासी हो गए।

## महाराजा मदन सिंह

*(विक्रमी सम्वत् १६५७ स १६८३)*

महाराजा शार्दूल सिंह के पुत्र महाराजा मदन सिंह का जन्म विक्रमी सम्वत १६४१ म कार्तिक शुक्ला चौदस को हुआ था। भाद्रपद शुक्ला अष्टमी का विक्रमी सम्वत् १६५७ म इनका राज्याभिषेक किया गया। इस समय यह केवल १६ वर्ष की अवस्था के किशोर ही थ, इसलिए राज्य का शासन प्रबध

रजीडेंट के निर्देश से एक राज्य कौंसिल करती रही। वयस्क हो जाने पर विक्रमी सम्वत १९६२ में इन्हें राज्य के सभी शासनाधिकार मिल गए।

विक्रमी सम्वत १९६४ में इन्हें अंगरेजी सेना का आनरेरी कप्टिन बनाया गया। फिर विक्रमी सम्वत १९६५ में पदोन्नति करके इन्हें मेजर का पद दिया गया।

१२ दिसम्बर १९१२ ई० को दिल्ली में इंग्लैण्ड के बादशाह एवं भारत सम्राट जार्ज पंचम का एक दरबार हुआ। अंग्रेजी राज्य के बड़े-बड़े पदाधिकारी एवं अखिल भारतीय स्तर के प्रतिष्ठित व्यक्तियों और देशी राज्यों के सभी नरेशों को भी वहाँ निमन्त्रित किया गया था। सभी आमन्त्रितों के लिए उनके पद एवं प्रतिष्ठा के अनुकूल ही कुर्सियाँ सुरक्षित थी।

जब महाराजा मदन सिंह दरबार में पहुँचे और उन्होंने देखा कि जोधपुर के ठाकुर कर्नल प्रताप सिंह की कुर्सी को इनकी कुर्सी से पहले स्थान दिया गया है तो इन्होंने इसका तीव्र विरोध किया।

कर्नल प्रताप सिंह रिश्ते में महाराजा मदन सिंह के चाचा थे किन्तु इनका कहना था यह प्रश्न प्रतापसिंह या मदनसिंह का नहीं है। मदन सिंह तो प्रताप सिंह का भतीजा है। किन्तु प्रश्न तो किशनगढ़ की राजगद्दी के सम्मान का है।

इनके तर्क को अंग्रेजी सरकार ने स्वीकार किया और इनकी कुर्सी कर्नल प्रतापसिंह की कुर्सी से पहले लगा दी गई।

दिल्ली के इस एतिहासिक दरबार में इन्हें के० सी० एस० आई० की उपाधि से विभूषित किया गया तथा इनके सम्मान में विशेष रूप से १५ तोपों की सलामी को बढ़ाकर १७ तोपों की सलामी कर दी गई।

जब योरोपीय प्रथम महायुद्ध हुआ तो यह अंग्रेजों की ओर से विदेशों में लड़ने के लिए गए और ६ माह तक युद्ध में अपनी वीरता का प्रदर्शन किया।

महाराजा मदन सिंह बड़े वीर कुशल प्रशासक एवं जनप्रिय राजा थे। इनके राज्य काल में प्रजा के सुख एवं समृद्धि के लिए अनेकों नये कार्य किए गए। इन्होंने मदनगंज मंडी को जिसे इनके पिता ने इनके ही नाम से बसाया था उन्नति के मार्ग पर अग्रसर किया। यह अपनी जनता को शिक्षित एवं प्रगतिशील देखना चाहते थे इसीलिए शिक्षा के क्षेत्र को उन्नति प्रदान करने के निमित्त इन्होंने राज्य भर में अनेकों प्राथमिक पाठशालायें व मिडिल स्कूल भी

खुलवाये। किशनगढ नगर में एक हाई स्कूल (एम० के० ई० एम०) इन्होंने ही स्थापित किया था, जो आजकल हायर सैकेंडी विद्यालय है।

इनके समय में ही विक्रमी सम्वत १६६० में किशनगढ नगर पालिका की स्थापना हुई थी। विक्रमी सम्वत १६८१ में अपनी पुत्री के विवाहोत्सव के अवसर पर इन्होंने बिजली घर बनवाया, जो राज्य का पहला बिजली घर था। टेलीफोन सेवा भी इनके ही समय में आरम्भ की गई थी।

नये नये भवनों के निर्माण कराने में भी इनकी विशेष रुचि थी। इन्होंने ही मदन निवास नामक भवन का निर्माण कराया था। उसी भवन में आजकल यज्ञ नारायण अस्पताल है। इसी प्रकार और भी कई अन्य इमारतें बनवा कर इन्होंने किशनगढ नगर को नया रूप देकर उसके सौन्दर्य को बढाया।

इन्होंने कृषि में उन्नति एवं सिंचाई की सुविधा के लिए कई बडे बडे जलाशयों का निर्माण कराया। आवागमन के साधनों को सुगम बनाने के लिए पुरानी सडकों का जीर्णोद्धार करके नई सडकें भी बनवाई गई।

रूपन नदी किशनगढ राज्य में बहती हुई इसके बहुत बडे क्षेत्र का जल अपने अन्दर में समेट कर सांभर झील में उंडेलती है। इस झील के जल से बहुत बडी मात्रा में हर वर्ष नमक तैयार होता है जिसका लाभ ब्रिटिश सरकार उठाया करती थी। मदन सिंह ही किशनगढ के पहले शासक थे जिनका ध्यान इस ओर गया। उन्होंने रूपन नदी के जल का मुआविजा ब्रिटिश सरकार से मांगा। ब्रिटिश सरकार ने उनकी इस मांग पर कोई ध्यान नहीं दिया। इनके कई बार याद दिलाने पर भी वह आना कानी करती रही। सरकार के इस व्यवहार से यह बहुत क्षुब्ध हुए और इन्होंने रूपन नदी पर एक विशाल बांध बनवा कर उसका सारा जल ही सांभर झील में जाने से रोकने की योजना बना डाली। इसके लिए विदेशों से इंजीनियर बुलाये गये। जब ब्रिटिश सरकार को इस योजना के विषय में मालूम हुआ तो उसे विवश होकर झुकना पडा तथा उसने किशनगढ राज्य को मुआवजे के रूप में १२ हजार रुपये तथा ५०० मन नमक देते रहना स्वीकार कर लिया।

पोलो इनका प्रिय खेल था जिसके यह भारत विख्यात खिलाडी थे। घोडों की इन्हें बहुत ऊँची पहिचान थी। पोलो खेलने के लिए घोडों को ट्रेनिंग देने में भी यह सिद्धहस्त थे। किशनगढ में इन्होंने एक स्टड खोल रखा था, जिसमें बहुत अच्छी अच्छी जाति के घोडे घोडियां पाले जाते थे। इन्हें केवल इस स्टड में ही तीन लाख रुपए वार्षिक की आय होती थी।

आखेट खेलना भी इनके मनोरंजन का एक साधन था। यह बहुधा शेर

और जंगली सूअर का ही शिकार किया करते थे। इन्होंने एक चीती (शिकारी चीता) पाल रखी थी जिसे इन्होंने इस तरह की ट्रेनिंग दी थी कि वह इनके साथ बिल्कुल पालतू कुत्ते की भाँति रहा करती थी। शिकार के समय भी यह चीती इनके साथ रहती थी। जब यह किसी जानवर का शिकार कर लेते थे तो उस मरे हुए जानवर को यह चीती ही उठाकर या खींच कर इनके पास लाया करती थी।

यह बड़े दयालु नरेश थे। इन्होंने अपने राज्य में चौथी का दण्ड बन्द कर दिया था। किशनगढ़ राज्य की परम्परानुसार जागीरदार अपनी आय में से प्रति रुपया साढ़े छः आने की दर से राज्य को कर रूप में दिया करते थे। इनके राज्य काल में कुछ जागीरदारों ने इस कर का विरोध किया किन्तु इन्होंने उन विरोधियों के साथ भी बड़ी दयालुता का व्यवहार किया तथा उन्हें बड़ी चतुराई से शान्त भी कर दिया।

यह दयालु होने के साथ-साथ दानी भी थे और यह दानशीलता भी बड़ी उच्च कोटि की थी। यह अपने पहिनने के कोट में नित्य नये सात बटन लगवाया करते थे। बटनों के रूप में सोने की मुहरें होती थीं। जिन्हें एक-एक करके शाम तक यह दान में दे डालते थे। यदि आवश्यकता होती थी तो इनके अतिरिक्त भी दान करते थे।

इनकी सहनशीलता एवं सहृदयता की एक बड़ी मनोरंजक घटना है।

एक बार किले के भीतर भगवान कल्याण राय जी के मन्दिर में कोई उत्सव था। यह भी दर्शनों के लिए जा रहे थे। साथ में दरबारी लोग तथा बहुत से अन्य व्यक्ति भी थे। एक व्यक्ति ने इनके साथ चलते चलते इनकी उँगली में से पन्ना जड़ी सोने की अँगूठी चुपके से उतार ली। इन्होंने अँगूठी का उँगली से उतारा जाना अनुभव करके भी उससे कुछ नहीं कहा और ऐसे बने रहे, जैसे इन्हें कुछ मालूम ही नहीं है।

मन्दिर में पहुँचकर इन्होंने खजांची से दूसरी अँगूठी मँगवाई और पहिन ली। मंदिर से लौटते समय उसी व्यक्ति ने फिर अँगूठी उतारने का प्रयास किया तो इन्होंने धीरे से उसके कान में कहा, "पहले एक तो हजम कर ले दूसरी के लिए फिर कोशिश करना। वह व्यक्ति शर्म से पानी हो गया।

यदि किशनगढ़ की जनता आज भी अपने प्रिय राजा मदन सिंह को याद करती है, तो इसमें आश्चर्य ही क्या है? विक्रमी सम्वत १९८३ में आसोज बदी चौथ के दिन इनका परलोक वास हो गया।



महाराजा यग नारायण सिंह

# महाराजा यज्ञ नारायण सिंह

*(विक्रमी सम्वत् १९८३ से १९९५)*

महाराजा मदन सिंह के कोई पुत्र नहीं था, इसलिए उनकी मृत्यु के पश्चात उनके काका महाराज जवान सिंह के पुत्र यज्ञनारायण सिंह को राज गद्दी पर बैठाया गया।

महाराज जवान सिंह बड़ी धार्मिक प्रकृति के व्यक्ति थे। इन्होंने अपने बड़े भाई महाराजा शार्दूल सिंह की सरक्षता में ५० भाग एव सोम यज्ञ सरीखे बड़े-बड़े धर्मानुष्ठान किये थे। ऐसा कहा जाता है कि सोम यज्ञ की पूर्णाहुति के ठीक नौ महीने बाद ही विक्रमी सम्वत १९५२ में माघ शुक्ला द्वादशी को महाराज जवान सिंह के यहाँ एक पुत्र का जन्म हुआ। धार्मिक सस्कार एव आस्था के कारण ही इन्होंने अपने पुत्र का नाम यज्ञ नारायण सिंह रखा। यही यज्ञ नारायण सिंह महाराजा मदन सिंह के बाद विक्रमी सम्वत १९८३ में मगसर सुदी ५ को किशन गढ राज्य के अधिकारी बने।

महाराजा यज्ञ नारायण सिंह के दो पुत्र थे। छोटे राज कुमार की मृत्यु तो उनके बचपन में ही उनकी ननिहाल मकसूदनगढ में हो गई थी। यह विधि की विडम्बना ही कही जा सकती है कि इनके राज्याभिषेक के कुछ ही दिनों बाद बड़े पुत्र महाराज कुमार जितेन्द्र सिंह भी चौदह वर्ष छः माह की अल्प आयु में ही किशनगढ राज्य को युवराज विहीन करके चल बसे। यह भी सयोग की बात है कि इनका शरीरान्त भी ननिहाल मकसूदनगढ में ही हुआ।

इन राजकुमारों की मृत्यु के कई वर्ष बाद तक महाराजा यज्ञ नारायण सिंह के कोई सन्तान नहीं हुई। इनकी महारानी ने इनसे दूसरा विवाह कर लेने का अनुरोध किया। किन्तु यह महारानी से बहुत प्रेम करते थे। इन्हें डर था—दूसरे विवाह के बाद कहीं महारानी का जीवन ही सौतिया झगड़ों में फँस कर कष्ट मय न हो जाये। अन्त में महारानी ने इनकी इस शका के निवारण का भी उपाय खोज निकाला। उन्होंने अपनी भतीजी प्रताप कुँवर से इनका विवाह सम्बन्ध पक्का कर दिया और इन्हें विवश होकर दूसरा विवाह करना पड़ा।

किन्तु

**मेरे मन कछु और है**
**कर्ता के कछु और।**

किशनगढ राज्य के उत्तराधिकारी की प्राप्ति के लिए ही बडी महारानी ने अनुरोध करके महाराजा यन नारायण सिंह का दूसरा विवाह कराया था। विवाह के बाद भी उनकी आशा पूरी नही हो सकी।

७ फरवरी सन १६३५ को छोटी महारानी ने एक पुत्री को जन्म दिया। इस राजकुमारी का नाम कल्याण कुंवरि रखा गया। कुछ दिन बाद बडी महारानी की आशाओ के मुरझाये पुष्प एक बार फिर खिल उठे। उन्हे राज्य का उत्तराधिकारी उत्पन्न हो जाने की इच्छा पूरी होती प्रतीत हुई, किन्तु इस बार भी बडी राजकुमारी के जन्म से लगभग साढे तीन वर्ष बाद, २३ जुलाई १६३८ को छोटी राजकुमारी गोरधन कुंवरि का जन्म हुआ और युवराज पद की पूर्ति न हो सकी।

राजकुंवरि के जन्म के कुछ दिनो बाद से महाराजा साहब रोगग्रस्त रहने लगे। अन्त मे ३ फरवरी १६३६ ई० को उनका स्वर्ग वास हो गया।

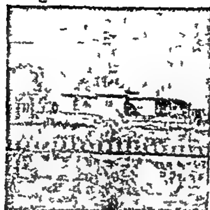
महाराजा यन नारायण सिंह ने अपने जीवन काल मे ही यह इच्छा प्रकट की थी — जिस स्थान पर मेरे जन्म हेतु सोम यज्ञ कराया गया था, उसी स्थान पर मेरा दाह सस्कार भी कराया जाये। जिस भूमि ने जन्म दिया है, मैं उसी भूमि की गोद मे विलीन होना चाहता हूँ।

उनकी इच्छानुसार वही उनका दाह सस्कार कराया गया।

यन नारायण सिंह जी व्यर्थ के रीति रिवाजो को पसन्द नही करते थे। यह राजाओ के कारज मे 'नुक्ता प्रथा (द्वादशे के दिन राज्य भर के स्त्री पुरुषो की दावत) के बिल्कुल विरुद्ध थे और इस प्रथा को समाप्त कर देना चाहते थे। अत इनकी इच्छा व आज्ञा के अनुसार इनके द्वादशे पर 'नुक्ता नही किया गया। केवल ब्राह्मणो, क्षत्रियो और गरीबो को ही भोजन कराया गया।

यह ज्योतिष विद्या के प्रकाण्ड विद्वान थे। गायक कवि एव शास्त्रीय सगीत के ज्ञाता भी थे। इनके बनाये पद राग सारग और राग सोरठ मे हैं।

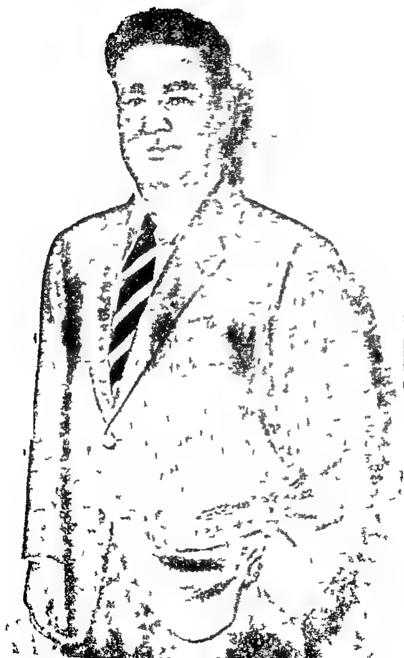
इन्होंने करकेडी के किले को खूब सुन्दर बनाया तथा करकेडी मे ही लाखो रुपये की लागत से अपने पिता जवानसिंह की संग मरमर की सुन्दर समाधि बनवाई।



करेडी में महाराज भवानसिंह की छतरी

इन्होने अपने जीवन काल में राज्य का कोई उत्तराधिकारी नही बनाया था, किन्तु इनकी लिखित इच्छा के अनुसार बड़ी महारानी ने १० वर्षीय बालक सुमेर सिंह को गोद लेकर राज्य का उत्तराधिकारी घोषित किया था।

---



# महाराजा सुमेर सिंह

## जीवन चरित्र

**बाल्यावस्था**

महाराजा सुमेर सिंह का जन्म माघ बदी दूज का विक्रमी सम्वत १९८५ तदनुसार तारीख २७ जनवरी सन १९२९ को ठिकाना जोरावर पुरा ग्राम में हुआ था। यह महाराज बुद्धि सिंह जी के द्वितीय पुत्र थे।

यह बचपन से ही बहुत होनहार, कुशाग्र बुद्धि एवं चंचल प्रकृति के थे। छोटे छोटे सम वयस्क ग्रामीण बालकों के साथ मिल कर खेलने में भी बालक सुमेर सिंह में अनोखी प्रतिभा होने का आभास पाया जाता था। ६-७ वर्ष की अल्प आयु में ही जब वह अपने संगी साथियों का नेतृत्व करता तो उसके हाव भाव को देख कर समझदार व्यक्ति चकित से रह जाते थे। कहावत है पूत के पाँव पालने में ही दिखाई दे जाते हैं।

वर्ड्सवर्थ ने सही लिखा है—The child is the father of the man (बच्चा मनुष्य का पिता होता है)। जिस प्रकार एक बीज में भावी विशाल वृक्ष गुप्त रूप से विद्यमान रहता है, उसी प्रकार एक बालक में मानवता का समावेश रहता है। बीज अंकुरित तो बहुत होते हैं, किन्तु पथिक को शीतल छाया प्रदान करने वाला विशाल वृक्ष बनने की क्षमता किसी किसी बीज में ही हो पाती है। वैसे तो मानव तो सभी हैं किन्तु मानवता बिरलों में ही पाई जाती है।

बालक सुमेर सिंह में किसी राज्य का शासक बनने की क्षमता रखने वाले गुणों के अंकुर प्रस्फुटित हो रहे थे। आयु बढ़ने के साथ साथ उस बालक हृदय में [illegible] एवं आदर्श के प्रति रुचि उत्पन्न हो गई थी। जब वह किसी

अच्छे घोड़े को देखता तो उसका मन उस पर सवारी करने के लिए मचल-मचल उठता। यदि कोई शिकारी किसी हिंस्र जंगली पशु का शिकार करके लाता तो वह भी वैसे ही भयानक जानवरों को अपनी बन्दूक से मार डालने की कल्पना किया करता था और अपनी इन प्रबल इच्छाओं को अपने संगी साथियों से कह डालता था।

शिकार करने तथा शिकारी जीवन की कहानियां को भी वह अपने समवयस्क बच्चों को सुनाया करता था। बच्चे बड़ी रुचि के साथ उसकी बातों को सुना करते थे और उसके ज्ञान व उसकी भावनाओं का लोहा मानते थे।

# प्रारम्भिक शिक्षा

बालक सुमेर सिंह की शिक्षा का प्रारम्भ अर्काडिया व गाठियाना ग्रामों की प्रारम्भिक पाठशालाओं में हुआ था, किन्तु कुछ दिनों बाद ही इन्हें शिक्षा प्राप्ति के लिए किशनगढ़ भेज दिया गया।

इधर किशनगढ़ नरेश महाराजा यज्ञ नारायण सिंह जी के दोनों कुंवर असमय में ही क्रूर काल के गाल में समा चुके थे। सन्तान के रूप में उनके केवल दो राजकुमारियाँ कल्याणि कुंवरि और गोरधन कुंवरि थी। यह दोनों भी अबोध बच्चियाँ ही थी। महाराजा साहब स्वयं भी रुग्ण रहा करते थे। उन्हें अपने बाद किशनगढ़ राज्य के उत्तराधिकारी की चिन्ता थी। वह उसकी खोज में थे।

हीरे की परख जौहरी ही जानता है। मानव गुणों को भी कोई गुणी ही पहिचान सकता है। महाराजा यज्ञ नारायण सिंह स्वयं भी बहुत गुणी थे और दूसरे के गुणों को पहिचान लेने की भी उनमें अभूतपूर्व क्षमता थी। वह बालक सुमेर सिंह की प्रतिभा एवं सादगी से बहुत प्रभावित थे। उनकी अनुभवी दृष्टि ने सुमेर सिंह में विकसित होते हुए गुणों पहिचान लिया और मन ही मन उन्हें किशनगढ़ राज्य का उत्तराधिकारी नियुक्त करने का निश्चय कर लिया, किन्तु महाराजा साहब को यह भी ध्यान था कि किशनगढ़ राजवंश की परम्परा के अनुसार किशनगढ़ का उत्तराधिकारी सुयोग्य एवं गुणी होने के साथ साथ शिक्षित एवं विद्वान भी होना चाहिए।

सुमेर सिंह अभी केवल नौ वर्ष के बालक ही थे अतः उन्हें समुचित शिक्षा दिलाया जाना अति आवश्यक था। उधर महाराजा साहब इस बात को भी गुप्त रखना चाहते थे कि किशनगढ़ राज्य का भावी उत्तराधिकारी कौन होगा। यदि रियासत की ओर से सुमेर सिंह को शिक्षा दिलाने का प्रबन्ध किया जाता तो भी उनके भावी उत्तराधिकारी होने का भेद खुल जाता।

कहते हैं जहाँ इच्छा होती है वहाँ उसकी पूर्ति की राह भी निकल आती है। महाराजा साहब ने इस समस्या का निदान भी खोज निकाला। उन्होंने अन्य जागीरदारों और ठिकानेदारों के कई क्षत्रिय बालक, जो सुमेर सिंह जी के समवयस्क थे बुलाये और उनके साथ सुमेर सिंह जी को भी रियासत के खर्चे से गवर्नमेंट हाई स्कूल अजमेर में पढ़ने के लिए भेज दिया।

एक वर्ष बाद उनमें से भी केवल दो को छाँट कर मेयो कालिज अजमेर में जहाँ राजाओं, महाराजाओं और बड़े-बड़े जागीरदारों के बच्चे पढ़ते थे, शिक्षा के लिये भर्ती करा दिया। उन दो में से एक सुमेर सिंह भी थे।

# राज्य का उत्तराधिकार

महाराजा यज्ञ नारायण सिंह जी ४ फरवरी सन १९३९ ई० को देव लोक सिधार गये। उन्होंने अपने स्वर्गवास से एक वर्ष पहले ही एक पत्र लिख कर बड़ी महारानी साहिबा के पास गुप्त रूप से रख दिया था जिसमें उन्होंने सुमेर सिंह जी को किशन गढ राज्य का उत्तराधिकारी नियुक्त किये जाने की अपनी इच्छा व्यक्त की थी। उसी समय उन्होंने उस पत्र की एक प्रतिलिपि पोलिटिकल एजेंट जयपुर के पास भी भिजवा दी थी।

महाराजा साहब की मातमी में जैसे अन्य सम्बन्धी एवं परिचित लोग आये वैसे ही ये दोनों क्षत्रिय बालक भी अजमेर से आये। उस समय किसी को पता नहीं था कि किशन गढ राज्य की गद्दी का अधिकारी कौन होगा।

महाराजा साहब के द्वादशे के दिन १५ फरवरी सन १९३९ ई० को बड़ी महारानी साहिबा ने स्वर्गीय महाराजा की इच्छानुसार, पोलिटिकल एजेंट की राय से कुंवर सुमेर सिंह को गोद लेकर किशन गढ राज्य वंश की परम्परानुसार, उनसे पगड़ी की रस्म पूरी कराई और उन्हें किशन गढ राज्य का उत्तराधिकारी घोषित कर दिया।

इसके बाद इंग्लण्ड के बादशाह एवं भारत सम्राट के प्रतिनिधि जो भारत के गवनर जनरल एवं वायसराय के रूप में यहाँ रहते थे उनसे मान्यता प्राप्त हो जाने पर २४ अप्रल सन १९३९ ई० को पोलिटिकल एजेंट जयपुर की सरक्षता में एक दरबार हुआ, जिसमें किशनगढ राज्य की परम्परानुसार आपको गद्दी पर बठा कर आपका राज्याभिषेक किया गया। १५ तोपों की सलामी दी गई तथा आपको किशनगढ राज्य की वंशानुगत उपाधि से विभूषित कर आपका नाम हिज हाईनस उम्दये राजहाय बुलन्द मकान महाराजाधिराज

महाराजा श्री सुमेर सिंह बहादुर हो गया। राज तिलक के इस शुभ अवसर पर ५ बन्दी भी कारागार से मुक्त किये गए।

आपकी शिक्षा मेयो कालिज मे सुचारु रूप से पूर्ववत् चलती रही। राज्य का प्रबंध पोलिटिकल एजेन्ट की सरक्षता मे राज्य कौंसिल के द्वारा बडी राजमाता जी ही करती रही।

# मेयो कालिज में

यही सभी जानते हैं कि लार्ड मैकाले ने भारतीय शिक्षा पद्धति को एक ऐसा रूप दिया था कि भारत का विद्यार्थी पढ़ लिख कर सिवाय नौकरी और वह भी विशेष कर सरकारी नौकरी, करने के अतिरिक्त किसी दूसरे काम मे बहुत कम रुचि ले पाये। किन्तु जिन राजा रईसो के पुत्रो को नौकरी नही करनी थी, उन्हे भी तो सरकार अपने साँचे मे ढालना चाहती थी। अत वायसराय लार्ड मेयो ने अजमेर मे मेयो कालिज की स्थापना इस उद्देश्य से कराई थी कि इस सस्था के माध्यम से देशी राज्यो के भावी शासको को समुचित अध्ययन के साथ साथ ब्रिटिश साम्राज्य के प्रति स्वामिभक्ति का पाठ भी पढाया जा सके। यही कारण था कि ब्रिटिश काल मे इस विद्यालय मे शिक्षा प्राप्त करने वाले देशी नरेशो जागीरदारो एव बडे बडे जमीन्दारो के पुत्र ही हुआ करते थे। साधारण वर्ग के छात्रो का इस कालेज मे प्रवेश पाना बिल्कुल असम्भव था।

कालिज अधिकारी इन विद्यार्थियो की सभी गति-विधियो पर विशेष दृष्टि रखते थे। इस विषय मे प्रधानाचार्य की गुप्त रिपोर्ट रहती थी। आवश्यकता पडने पर वह रिपोर्ट भारत सरकार को भी भेजी जाती थी तथा सरकार उसके आधार पर आवश्यक कदम उठाया करती थी।

अग्रेजी शासन के विरुद्ध सन १९४२ ई० की क्रान्ति मे विद्यार्थियो की प्रमुख भूमिका रही थी। यदि इस क्रान्ति को विद्यार्थी आन्दोलन का नाम दिया जाये तो अनुचित नही होगा। यद्यपि तत्कालीन ब्रिटिश सरकार ने बडे बडे नेताओ को जेल के सीखचो मे बद करके इस क्रान्ति का अपने क्रूर अत्याचारो के बल पर दमन अवश्य कर दिया था, किन्तु उसकी चिनगारियाँ

युवा वग मे—विशेष कर विद्यार्थियो म भीतर ही भीतर सुलग रही थी, अत सरकार विद्यार्थियो की ओर से विशेष रूप से सजग थी।

लखक को मेयो कालिज के कुछ पुरान शिक्षको से बातचीत करने पर पता चला कि भले ही इस कालिज के विद्यार्थियो ने अन्य विद्यार्थियो की भाति कोई आन्दोलन न किया हो, किन्तु देश म फली राष्ट्रीयता की भावना से यह विद्यालय भी अछूता न रह सका था।

कहा जाता है कि यहाँ के प्रधानाचाय ने अपनी गुप्त रिपोट म सरकार को लिखा था कि उदयपुर के भगवत सिंह (वतमान महाराणा भगवत सिंह जी) बनारस के विभूति नारायण सिंह (वतमान महाराजा विभूति नारायण सिंह जी) और किशनगढ के सुमर सिंह (स्व० महाराजा सुमेर सिंह जी) म अंग्रेजो के विरुद्ध राष्ट्रीयता की भावना विशेष रूप स पल्लवित हो रही है।

इस रिपोट के आधार पर इन तीनो का किसी न किसी बहाने से, विद्यालय से हटा दना ही सरकार न उचित समझा।

इनम सुमेर सिंह जी यद्यपि आयु मे सब स छोटे थे, किन्तु वह किशन गढ के महाराजा बन चुके थे। अत इन्हे तो राज्याधिकार दे दने का बहाना था ही, किन्तु न तो महाराजा भगवत सिंह जी उस समय तक महाराजा हुए थे और न महाराजा विभूति नारायण सिंह जी ही महाराजा थे। इसलिये सरकार ने भगवत सिंह जी को तो सेना म भेज दिया और विभूति नारायण सिंह को भी किसी बहाने से बनारस मे ही शिक्षा प्राप्त करने के लिये भिजवा दिया। इस प्रकार हम दखते हैं कि उस समय राष्ट्रीय चेतना केवल जन साधारण मे ही नहीं थी, बल्कि राजा रईसो म भी पर्याप्त मात्रा मे पनप चुकी थी।

मेयो कालिज की एक वार्षिक पत्रिका अंग्रेजी मे छपती है जिसमे उस वष का पूरा विवरण रहता है कि किस विद्यार्थी की पढने, खेलने कूदने व कालिज सम्बधी अय क्रीडाओ (activities) म कैसी रुचि रही तथा उसने अपनी कक्षा या विद्यालय म कौन सा स्थान या पद ग्रहण किया। इस सम्बध मे कालिज हाल की गलरियो म भी बोड लगे हैं जिन पर विद्यार्थी का नाम, कक्षा तथा कौन से सन म कौन सा पद ग्रहण किया यह सभी लिखा रहता है।

सन १९४० से लेकर १९४७ तक की इन वार्षिक पत्रिकाओ का अध्ययन करने से महाराजा सुमेर सिंह के सम्बध म पता चलता है कि इन्हें पढाई से सम्बधित तो बहुत कम पुरस्कार मिले, किन्तु खेल कूद एव व्यायाम के सम्बध म इन्होने बहुत से पुरस्कार प्राप्त किये।

इनको हर खेल का 'कलर' प्राप्त था। (जो विद्यार्थी जिस खेल की कालिज टीम मे खेलता है, वह उस खेल का 'कलर' धारण करने वाला (Colour holder) कहलाता है। ये इस प्रकार की लगभग हर टीम के खिलाडी थे। इसके साथ साथ यह कई खेलो के कालिज कैप्टिन भी रहे तथा कई खेलो के सर्वश्रेष्ठ खिलाडी भी घोषित हुये।

निम्नलिखित खेलो एव क्रीडाओ (Games and sports) मे इन्हे विशेष रुचि थी —

## खेल

१ हाकी (Hockey)
२ क्रिकिट (Cricket)
३ फुटबाल (Foot ball)
४ टनिस (Tennis)
५ स्काश (Squash)
६ साइकिल पोलो (Cycle Polo)

क्रीडायें (Sports and activities) —

१ तैरना (Swimming)
२ घुड सवारी (Riding)
३ उछाल (Jumping)
४ टेन्ट पगिंग (Tent Pegging)
५ स्काउटिंग (Scouting)

निम्नलिखित खेलो के कलर इनके पास थे —

१ हाकी
२ क्रिकिट
३ फुटबाल
४ टनिस
५ स्काश



महाराजा सुमेर सिंह जी मक्षेसा के टेनिस लान पर

महाराजा सुमेर सिंह से सम्बंधित मेयो कालिज हाल की गलरियो के बोर्डों तथा मेयो कालिज की वार्षिक पत्रिकाओं में जो विवरण अंकित है वह इस प्रकार है —

सन १९३९ से लेकर १९४६ ई० तक यह अपनी कक्षा में सदैव सर्वप्रथम स्थान प्राप्त करते रहे।

सन १९४० ई०—

सातवीं कक्षा में कक्षा के कप्टिन, धर्म के सम्बंध में विशेष पुरस्कार।

सन १९४१ ई०—

ऊँची उछाल (High Jump) ३ फीट ९ इंच में सर्व प्रथम।

सन १९४३ ई०—

घुड़सवारी टेंट पगिंग (Riding Tent Pegging) में द्वितीय स्थान।

सन १९४४ ई०—

कक्षा के कप्टिन।
(Merit) का प्रमाण पत्र।

सन् १९४५ ई०—

टेनिस के सर्वश्रेष्ठ खिलाड़ी।
(Tennis Championship) Senior Division
व्यायाम सम्बन्धी खेलों के सर्वश्रेष्ठ खिलाड़ी
(Athelatic Championship) B Division

सन १९४६ ई० —

१ टेनिस स्कूल टीम के कप्टिन
(Tennis Championship of School)
२ घुड़सवारी के स्क्वाड्रन कमांडर
(Riding Squardon Commander)
३ हॉकी के द्वितीय कप्तान
(Vice Captain of Hockay)

सन १९४७—

१ स्कूल के टनिस कप्टिन
(Tennis Caption of School)

२ कालिज मानिटर
(College Monitor)

३ स्कूल के हाकी कप्टिन
(Hockey Captain of School)

४ स्कूल के टनिस कैप्टिन
(Tennis Captain of School)

५ व्यायाम सम्बन्धी खेलो के स्कूल कैप्टिन
(Athelatic Sports Captain of School)

५ जून १९४७ ई० को शासनाधिकार प्राप्त हो जाने पर इन्होंने कालिज छोड दिया और राज्य व्यवस्था ठीक करने की ओर अपना ध्यान केन्द्रित किया।

# राज्याधिकार

भारत को स्वतन्त्रता देने से पूर्व ब्रिटिश सरकार ने मई १९४६ ई० में अपना एक प्रतिनिधि मंडल भारत भेजा था। उस प्रतिनिधि मंडल ने अपने १६ मई १९४६ के ज्ञापन में भारतीय रियासतों के विषय में अपनी नीति घोषित करते हुए कहा था —

'भारतीय रियासतों के साथ इंग्लैंड के बादशाह की एक विशेष संधि है, उसी सन्धि के अनुसार ये रियासतें इंग्लैंड के बादशाह की सार्वभौम सत्ता के आधीन हैं। भारत को स्वतन्त्रता देते समय इंग्लैंड के बादशाह और रियासतों के बीच हुई यह संधि समाप्त कर दी जायेगी। इस प्रकार इन रियासतों पर सार्वभौम सत्ता न तो इंग्लैंड के बादशाह के पास रहेगी और न भारत या पाकिस्तान किसी अधिराज्य को ही यह सार्वभौम सत्ता सौंपी जा सकती है।

अतः १५ अगस्त १९४७ ई० को जब भारतीय स्वतन्त्रता अधिनियम १९४७ लागू किया जायगा तथा भारत और पाकिस्तान दोनों राज्यों की स्वतन्त्र सरकारें अस्तित्व में आयेंगी उसी दिन और उसी समय से समस्त भारतीय रियासतें पूर्णतः स्वतन्त्र हो जायेंगी तथा उनके नरेशों को सम्पूर्ण प्रभु-सत्ता-सम्पन्न नरेश के अधिकार प्राप्त हो जायेंगे।

इसलिए जिन रियासतों के शासनाधिकार ब्रिटिश रजीडेन्टों के पास थे जून सन १९४७ ई० के अन्त तक वे सब उन सब रियासतों के नरेशों को सौंप दिये गये।



(राज्याधिकार प्राप्ति के समय)
हिज हाईनस उम्दये राजहाय बुलन्द मकान महाराजाधिराज महाराजा श्री सुमेर सिंह जी बहादुर राजसिंहासन पर।

महाराजा सुमेर सिंह जी की अल्पावस्था होने के कारण यहाँ का शासन जयपुर के पोलिटिकल एजेंट के अधिकार में था। अतः ५ जून सन १९४७ ई० को पोलिटिकल एजेंट जयपुर ने किशनगढ़ के किले में किशनगढ़ राज्य की परम्परा के अनुसार एक दरबार बड़ी सजधज के साथ कराया तथा राज्य के समस्त उमरावों जागीरदारों ठिकानेदारों एवं राज्य सरकार के बड़े-बड़े अफसरों व जनता के विशिष्ट व्यक्तियों की उपस्थिति में हिज हाईनस उमदये राजहाय बुलन्द मकान महाराजाधिराज महाराजा श्री सुमेर सिंह जी बहादुर को किशन गढ के राज्य सिंहासन पर बैठा कर १५ तोपों की सलामी के साथ इंगलैंड के बादशाह एवं भारत सम्राट के प्रतिनिधि भारत के गवर्नर जनरल एवं वायसराय की ओर से जयपुर के रेजीडेंट ने किशन गढ राज्य के शासनाधिकार इन्हें सौंप दिये।



राजसी वस्त्रों में महाराजा सुमेर सिंह

इस प्रकार इनको १८ वर्ष ४ माह व ८ दिन की अल्प अवस्था में ही अपने राज्य का पूर्ण शासन अधिकार प्राप्त हो गया।

# राज्य का शासन प्रबन्ध

मुस्लिम काल तक भारत में जो भी सरकारें बनी, वे न्याय की सरकारें कही जाती थी। उन दिनों न्यायाधिकारी कानून पर बहुत कम, सही न्याय पर अधिक बल दिया करते थे। किन्तु अंग्रेजी राज्य के प्रादुर्भाव ने अदालतों में न्याय के लिए कानून पर ही अधिक बल दिये जाने की परम्परा डाली। इसीलिए ब्रिटिश सरकार को Government of Justice न कह कर Government of law अर्थात् न्याय की सरकार न कह कर कानून की सरकार कहा जाता है।

समय परिवर्तन के साथ देशी राज्यों के शासन प्रबन्ध में भी धीरे धीरे परिवर्तन होते गए। ब्रिटिश शासन व्यवस्था को सभी रियासतों ने अपने अपने तरीके से अपनाना आरम्भ कर दिया तथा मुख्य मुख्य ब्रिटिश कानून भी सभी राज्यों में लागू किए गए।

बिकानेर राज्य के शासन प्रबन्ध में महाराजा शार्दूल सिंह के समय में ही नये परिवर्तन कर दिए गये थे। जिस समय महाराजा सुमेर सिंह ने शासनाधिकार अपने हाथों में लिया। उस समय राज्य का शासन प्रबन्ध निम्न प्रकार से था —

महाराजा की अध्यक्षता में एक कौंसिल द्वारा राज्य का शासन प्रबन्ध किया जाता था। यह कौंसिल ही राज्य के हर प्रकार के कार्य सचालन के लिए उत्तरदायी होती थी। अधिकांशतः कौंसिल में चार मेम्बर होते थे —

१ चीफ मेम्बर (जिसे मुख्य मंत्री या प्राइम मिनिस्टर भी कहा जाता था।)

२ रवेन्यू मेम्बर।

३ होम मेम्बर।

४ डवलपमेन्ट मेम्बर।

इन मेम्बरों के अधिकार में भिन्न भिन्न विभाग होते थे और ये मेम्बर समय-समय पर अपने विभागों एवं उप विभागों की जाँच के लिए राज्य भर का दौरा किया करते थे। वे प्रजा की समस्याओं एवं आवश्यकताओं को कौंसिल की मीटिंग में रखते थे। उन पर विचार विमर्श होने के बाद, कौंसिल द्वारा जो भी व्यवस्था, नियम या कानून उचित समझा जाता था उसे महाराजा के पास अन्तिम निर्णय के लिए भेजा जाता था। फिर महाराजा का जो निर्णय होता उसी के अनुसार कार्य आरम्भ किया जाता था।

वैसे तो इन मेम्बरों के विभागों एवं उप विभागों की बड़ी लम्बी लम्बी सूचियाँ हैं किन्तु कुछ मुख्य मुख्य सूचियाँ ही यहाँ दी जा रही हैं जिससे इनके कार्यों एवं शासन प्रबन्ध की रूप रेखा स्पष्ट हो जायगी —

## १ चीफ मेम्बर—

विभाग —सर्व साधारण एवं राजनैतिक।

उप विभाग राज्य में होने वाले उत्सव महाराजा का जन्मोत्सव व दरबार इत्यादि।

विभाग —द्रव्य।

उप विभाग हिसाब का लेखा जोखा (Accounts), आय के साधनों में धन लगाना (Envestments) खजाने (Treasuries), सामन की हवेली (जहाँ सरकारी अनाज जमा किया जाता था) और टकसाल इत्यादि।

विभाग —सुरक्षा (Protection)।

उप विभाग माल व फौजदारी की अदालतें पुलिस जेल, संविधान इत्यादि।

## २ रेवेन्यू मेम्बर—

विभाग व उप विभाग कृषि विभाग, लगान वसूली चुंगी सिंचाई अकाल, मन्दिर अनाथालय पंचायत इत्यादि।

३ होम मेम्बर—

विभाग एव उप विभाग सब प्रकार की सेना (तोपखाना, घुड सवार पन्ल सवार इत्यादि), सनद पटटा व स्वास्थ्य विभाग, अस्पताल, किले व महल का प्रबन्ध इत्यादि।

४ डवलपमेन्ट मेम्बर—

विभाग —सड़कें एव यातायात।

उप विभाग नई इमारतें बनवाना व पुरानी इमारतो की मरम्मत इत्यादि।

विभाग —उद्योग (Industries)।

उपविभाग बिजली, टैलीफ़ोन मिल इत्यादि।

उपविभाग पत्थर खानें अन्य खानें, उनकी जाँच व आय-व्यय का लेखा जोखा इत्यादि।

विभाग —नगर पालिकाएँ, राज्य पुस्तकालय, शिक्षा व सहकारिता इत्यादि।

## शासन प्रबन्ध

शासन प्रबन्ध की सुविधा के लिए राज्य को चार जिलों म विभाजित किया गया था—रूप नगर, किशनगढ, मरवाड और अराई। ये जिले हुकूमत कहलाते थे और उनके प्रशासक को हाकिम कहा जाता था। हाकिम क नीचे तहसीलदार और पटवारी होते थे। हाकिम को अपनी हुकूमत मे वही अधिकार प्राप्त थे जो आज किसी जिले के कलक्टर को होते हैं।

रियासत के विलीनीकरण से पूव जमीन व लगान का बन्दोवस्त हो चुका था। बन्दोवस्त से पूव किसानो से लगान रुपयो म नही, अनाज मे लिया जाता था।

## न्याय विभाग

इस विभाग क सर्वोच्च अधिकार तो महाराजा को ही थे। उन्हें फाँसी का भी दण्ड क्षमा करने का अधिकार था। किसी पेचीदा मामले में महाराजा

३ होम मेम्बर।

४ डवलपमन्ट मेम्बर।

इन मम्बरो के अधिकार म भिन्न भिन्न विभाग होते थे और ये मम्बर समय समय पर अपने विभागो एव उप विभागो की जाँच के लिए राज्य भर का दौरा किया करते थ। वे प्रजा की समस्याओ एव आवश्यकताओ को कौंसिल की मीटिंग मे रखते थे। उन पर विचार विमश होने के बाद, कौंसिल द्वारा जो भी व्यवस्था नियम या कानून उचित समझा जाता था, उसे महा राजा के पास अन्तिम निणय के लिए भेजा जाता था। फिर महाराजा का जो निणय होता उसी के अनसार काय आरम्भ किया जाता था।

वैसे तो इन मेम्बरो के विभागो एव उप विभागो की बडी लम्बी लम्बी सूचियाँ हैं, किन्तु कुछ मुख्य मुख्य सूचिया ही यहाँ दी जा रही हैं जिससे इनके कार्यों एव शासन प्रबन्ध की रूप रेखा स्पष्ट हो जायेगी —

## १ चीफ मेम्बर—

विभाग —सव साधारण एव राजनतिक।

उप विभाग राज्य मे होने वाले उत्सव महाराजा का जन्मोत्सव व दरबार इत्यादि।

विभाग —द्रव्य।

उप विभाग हिसाब का लेखा जोखा (Accounts), आय के साधनो मे धन लगाना (Envestments) खजाने (Treasuries) सामन की हवेली (जहाँ सरकारी अनाज जमा किया जाता था) और टक्साल इत्यादि।

विभाग —सुरक्षा (Protection)।

उप विभाग माल व फौजदारी की अदालतें, पुलिस जल सविधान इत्यादि।

## २ रेवेन्यू मेम्बर—

विभाग व उप विभाग कृषि विभाग, लगान वसूली चुगी, सिचाई अकाल, मन्दिर, अनाथालय, पचायत इत्यादि।

## ३ होम मेम्बर—

विभाग एवं उप विभाग सब प्रकार की सेना (तोपखाना, घुड़ सवार, पैदल सवार इत्यादि), सनद पट्टा व स्वास्थ्य विभाग, अस्पताल, किले व महल का प्रबन्ध इत्यादि।

## ४ डवलपमेन्ट मेम्बर—

विभाग —सड़कें एवं यातायात।

उप विभाग नई इमारतें बनवाना व पुरानी इमारतों की मरम्मत इत्यादि।

विभाग —उद्योग (Industries)।

उपविभाग बिजली टैलीफ़ोन, मिल इत्यादि।

उपविभाग पत्थर खदानें, अन्य खानें, उनकी जाँच व आय-व्यय का लेखा जोखा इत्यादि।

विभाग —नगर पालिकाएँ, राज्य पुस्तकालय, शिक्षा व सहकारिता इत्यादि।

## शासन प्रबन्ध

शासन प्रबन्ध की सुविधा के लिए राज्य को चार जिलों में विभाजित किया गया था—रूप नगर, किशनगढ़, सरवाड़ और अराई। ये जिले हुकूमत कहलाते थे और उनके प्रशासक को हाकिम कहा जाता था। हाकिम के नीचे तहसीलदार और पटवारी होते थे। हाकिम को अपनी हुकूमत में वही अधिकार प्राप्त थे, जो आज किसी जिले के कलक्टर को होते हैं।

रियासत के विलीनीकरण से पूर्व जमीन व लगान का बन्दोबस्त हो चुका था। बन्दोबस्त से पूर्व किसानों से लगान रुपयों में नहीं, अनाज में लिया जाता था।

## न्याय विभाग

इस विभाग के सर्वोच्च अधिकार तो महाराजा को ही थे। उन्हें फाँसी का भी दण्ड क्षमा करने का अधिकार था। किसी पेचीदा मामले में महाराजा

कौंसिल की बैठक बुलाकर भी विचार विमर्श करते थे तब अपना कोई निर्णय देते थे। न्याय विभाग का सर्वोच्च अधिकारी चीफ जज (मुख्य न्यायाधीश) होता था। यही एक अतिरिक्त मेम्बर भी करते थे। एक डिस्ट्रिक्ट सेशन्स जज के पदों को भी आगे रखा गया था। डिस्ट्रिक्ट सेशन्स जज के नीचे हाकिम अदालत दीवानी, हाकिम अदालत फौजदारी, हाकिम अदालत [illegible] होते थे। इन हाकिम अदालतों का अपील डिस्ट्रिक्ट सेशन्स जज के यहाँ होती थी।

## पुलिस

इस विभाग पर पूर्ण पुलिस अफसर के अधिकार में था। विलीनीकरण से पहले इस अधिकारी का नाम इन्सपेक्टर जनरल पुलिस हो गया था। इसके नीचे डिप्टी सुपरिटेंडेंट होता था। उसके नीचे थानेदार या दरोगा जो एक थाने का अधिकारी होता था। राज्य में लगभग आठ थाने थे। थानेदार के नीचे हेड कांस्टेबिल व कांस्टेबिल होते थे जो सिपाही कहलाते थे। पहरे पर चौकीदारी के लिए 'कच्ची पोस' के सिपाही भी थे। इनका वेतन के रूप में पेन्शन का भाग राज्य भण्डार से और 'अमल पानी' के रूप राज्य कोष से मिला करता था।

## अर्थ विभाग

इसके लिए एक केन्द्रीय दफ्तर (Central Accounts Office) था। इसके अधिकारी को हाकिम मुस्तोफी या 'आडीटर' नाम से सम्बोधित किया जाता था। विलीनीकरण के समय इस एकाउन्टेन्ट जनरल कहा जाने लगा था। राज्य भर के सभी विभागों की आय व्यय का लेखा जोखा यहाँ किया जाता था।

## चुंगी

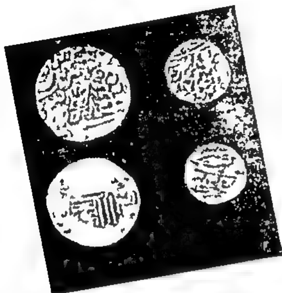
चौकी चुंगी का केन्द्रीय कार्यालय प्रत्येक हुकूमत में होता था। उसके अधिकारी को सायर हाकिम कहते थे।

## इमारत विभाग

यह विभाग [illegible] के नये

की देखभाल कर उनकी मरम्मत की व्यवस्था करता था। नये भवनों का निर्माण भी यही विभाग कराता था।

## टकसाल



किशनगढ़ राज्य के सिक्के।

टकसाल मे शुद्ध सोने चाँदी के सिक्के ढाले जाते थे। ये सिक्के जैसे मुहर व रुपये इत्यादि केवल आभूषण बनाने के काम आते थे। वैसे बाजार मे तो अंग्रेजी सिक्का ही चलता था। टकसाल के सिक्के तो केवल इसलिए बनाये जाते थे कि जनता को शुद्ध सोना व चाँदी उपलब्ध हो सके।

## डाकघर

भारत के अन्य भागों की भाँति ही यहाँ भी डाक व तार घर ब्रिटिश सरकार के ही थे। किंतु राज्य के भीतर चिट्ठी-पत्री आने जाने की व्यवस्था के




किशनगढ़ राज्य के डाक टिकट।

लिए राज्य सरकार का डाकखाना अलग था। एक पैसे का पोस्ट कार्ड व दो पैसे का लिफाफा राज्य भर में एक स्थान से दूसरे स्थान को, कहीं भी भेजा जा सकता था।

## आय व व्यय

आय का मुख्य स्रोत केवल कृषि का लगान ही था। फिर भी चुंगी आबकारी, डाकघर पत्थर खान व अन्य प्रकार की खानों से भी आय होती थी। इन सब विभागों से कुल मिलाकर राज्य की आय लगभग १८ लाख रुपये वार्षिक थी। व्यय भी लगभग इतना ही हो जाता था। बचत केवल नाम मात्र की होती थी।

जनता पर करों का भार नहीं था। किसी प्रकार का आय कर या बिक्री कर जैसी कोई वस्तु थी ही नहीं। इससे व्यापारियों को बड़ी सुविधा थी। यही कारण था कि इस छोटे से राज्य में उद्योगों की पर्याप्त उन्नति हुई। रियासत के बाहर जाने वाली वस्तुओं पर भी 'कस्टम' नहीं था। वनस्पति घी पर अवश्य कठोर प्रतिबंध था। यह रियासत के भीतर नहीं लाया जा सकता था। कुल मिला कर शासन प्रबंध अच्छा था। जनता में संतोष था। अपराध भी बहुत कम होते थे।

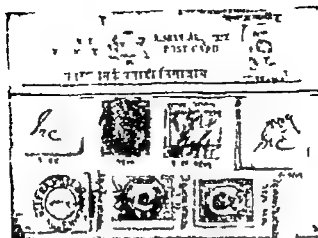
यहाँ का राज वश कट्टर वैष्णव होते हुए भी सदैव धर्म निरपेक्ष रहा। यहाँ सभी धर्मों का समान आदर किया जाता था। सभी धर्मावलम्बी आपस मे मिलकर रहते थे। साम्प्रदायिकता एव साम्प्रदायिक झगडे जैसी वस्तु इस भूमि पर कभी उत्पन्न ही नही हुई।

## जागीरदार

राज्य में जागीरदारी प्रथा थी। जागीरदार तीन श्रेणियो मे विभक्त थे। प्रथम श्रेणी के उमराव, द्वितीय श्रेणी के जागीरदार तथा तृतीय श्रेणी के ठिकानेदार कहलाते थे। ये लोग जो लगान किसानो से वसूल करते थे, उसका रुपए मे साढे छ आने के हिसाब से इन्हे राज भडार या राज कोष मे जमा करना होता था।

इन्हे अन्य बडी रियासतो के जागीरदारो की भाँति शासन के अधिकार नही थे। ये तो केवल ब्रिटिश राज्य के जमीदारो की भाँति राज्य सरकार और किसानो के बीच मे एक मध्यवर्ग था। फिर भी जनता व राज दरबार में इनका सम्मान था। राज दरबार मे इनके लिए कुर्सियाँ नियुक्त थीं।

कोई कोई उमराव या जागीरदार राज्य मे ऊँचे पदो पर नियुक्त भी किए जाते थे, किन्तु इसके लिए वे कोई वेतन नही लेते थे।



बिजावर राज्य के कार्ड [illegible] ।

लिए राज्य सरकार का डाकखाना अलग था। एक पैसे का पोस्ट कार्ड व दो पैसे का लिफाफा राज्य भर मे एक स्थान से दूसरे स्थान को कहीं भी भेजा जा सकता था।

## आय व व्यय

आय का मुख्य स्रोत केवल कृषि का लगान ही था। फिर भी चुंगी, आबकारी, डाकघर, पत्थर खान व अन्य प्रकार की खानो से भी आय होती थी। इन सब विभागो से कुल मिलाकर राज्य की आय लगभग १८ लाख रुपये वार्षिक थी। व्यय भी लगभग इतना ही हो जाता था। बचत केवल नाम मात्र की होती थी।

जनता पर करो का भार नही था। किसी प्रकार का आय कर या बिक्री कर जैसी कोई वस्तु थी ही नही। इससे व्यापारियो को बड़ी सुविधा थी। यही कारण था कि इस छोटे से राज्य मे उद्योगो की पर्याप्त उन्नति हुई। रियासत के बाहर जाने वाली वस्तुओ पर भी 'कस्टम' नही था। वनस्पति घी पर अवश्य कठोर प्रतिबंध था। यह रियासत के भीतर नही लाया जा सकता था। कुल मिला कर शासन प्रबंध अच्छा था। जनता मे संतोष था। अपराध भी बहुत कम होते थे।

यहा का राज वश कट्टर वैष्णव होते हुए भी सदैव धर्म निरपेक्ष रहा। यहां सभी धर्मों का समान आदर किया जाता था। सभी धर्मावलम्बी आपस मे मिलकर रहते थे। साम्प्रदायिकता एव साम्प्रदायिक झगडे जैसी वस्तु इस भूमि पर कभी उत्पन्न ही नहा हुई।

## जागीरदार

राज्य म जागीरदारी प्रथा थी। जागीरदार तीन श्रेणियो मे विभक्त थे। प्रथम श्रेणी के उमराव, द्वितीय श्रेणी के जागीरदार तथा तृतीय श्रेणी के ठिकानेदार कहलाते थे। ये लोग जो लगान किसानो से वसूल करते थे, उसका रुपए म साढे छ आने के हिसाब से इन्हें राज भडार या राज कोष मे जमा करना होता था।

इन्हें अन्य बडी रियासतो के जागीरदारो की भाँति शासन के अधिकार नहा थे। ये तो केवल ब्रिटिश राज्य के जमीदारो की भाँति राज्य सरकार और किसानो के बीच मे एक मध्यवर्ग था। फिर भी जनता व राज दरबार में इनका सम्मान था। राज दरबार मे इनके लिए कुर्सियाँ नियुक्त थी।

कोई कोई उमराव या जागीरदार राज्य मे ऊँचे पदा पर नियुक्त भी किए जाते थे, किन्तु इसके लिए वे कोई वेतन नही लेते थे।

## माइनोरिटी गवर्नमेन्ट

### (Minority Government)

### (रेजीडेन्ट के अधिकार मे राज्य)

महाराजा सुमेर सिंह की अल्पावस्था मे राज्य का प्रबन्ध जयपुर के रेजीडेन्ट के द्वारा किया जाता था। इस प्रबन्ध मे अन्तर केवल इतना ही रहा कि महाराजा के सारे शासनाधिकार रेजीडेन्ट के हाथ मे पहुँच गये थे। अन्य शासन प्रबन्ध बिल्कुल वैसे ही चलता रहा। चीफ मेम्बर को शासन प्रबन्ध की वार्षिक रिपोर्ट रेजीडेन्ट को देनी पड़ती थी। भूमि व लगान का बन्दोबस्त इसी सरकार ने कराया था तथा कुछ बचत करके राज कोष मे वृद्धि भी की गई थी।

# शासन सुधार

यद्यपि महाराजा सुमेर सिंह का शासनाधिकार राज्य पर केवल १० महीने २७ दिन रहा, किन्तु इस थोड़े से समय में ही उन्होंने शासन से सम्बंधित जो काम किए उनकी अल्प आयु को देखते हुए वे बहुत प्रशंसनीय हैं।

राज्य के बहुत से उमरावों, जागीरदारों एवं ठिकाने दारों पर राज्य कर के रूप में लाखों रुपया बकाया था। वे लोग इस राज्य ऋण के भार से दबे जा रहे थे। सुमेर सिंह जी ने शासनाधिकार अपने हाथ में लेते ही उनकी विषम स्थिति को समझा तथा एक राजाज्ञा निकालकर वह सारा बकाया माफ कर दिया।

किशनगढ़ राज्य की प्रथा के अनुसार एक नियम यह था कि यदि कोई व्यक्ति संतान न होने पर किसी को गोद ले तो उस गोद लेने वाले व्यक्ति की कुल सम्पत्ति की एक वर्ष की आय राज्य कोष में 'टैक्स' के रूप में जमा करनी पड़ती थी। तभी वह गोद लिया गया व्यक्ति उस सम्पत्ति का उत्तराधिकारी माना जा सकता था। आपने इस टैक्स को भी माफ कर दिया।

रेख चाकरी भुकाने की धन राशि, बिराडा (राज परिवार में होने वाले विवाहों के लिए जनता से वसूल किया जाने वाला खर्चा) चाकरी जुर्माना (बुलवाने से जागीरदार के न आने पर उसे जुर्माना देना पड़ता था) आदि सब प्रथायें आपने बन्द कर दी।

जंगलात में नीम आदि वृक्षों पर से रियासत की सरकार का अधिकार समाप्त करके जागीरदारों के अधिकार में दे दिये गए। पक्का मकान जो लावारिस होता था उस पर रियासत की सरकार का अधिकार होता था। ऐसे मकानों पर भी जागीरदारों का अधिकार माना जाने लगा

इन्होंने जीप गाडियां का एक रिसाला 'सुमेर स्क्वाड' के नाम से बनाया। उस रिसाले के अन्तर्गत हर पुलिस थाने में एक जीप व वायर लैंस का प्रबन्ध किया गया।

इसके अतिरिक्त आपने कन्या पाठशाला, पुलिस लाइन, वेटरनरी हास्पिटल, यज्ञ नारायण सिंह सिविल हास्पिटल स्थापित किए।

अजमेर कोठी, मझेला कोठी तथा मित्र निवास कोठी की मरम्मत कराई। मित्र निवास का नाम बदल कर सुमेर निवास कर दिया गया। आप एक कालिज की इमारत भी बनवा रहे थे। इतने में ही रियासत का विलीनीकरण हो गया और वह इमारत बनने से रह गई।

जनता का हर व्यक्ति आपसे मिल सकता था। अपनी बात कह सकता था। उसका समुचित प्रबन्ध किया जाता था। यही कारण है कि आप अपने थोडे दिन के राज्यकाल में ही किशनगढ राज्य की जनता में बहुत लोकप्रिय हो गए थे।

# विलीनीकरण

भारतीय स्वतन्त्रता अधिनियम सन १९४७ के अनुसार भारत की ५६५ छोटी बडी सभी रियासतें १५ अगस्त सन् १९४७ से सम्पूर्ण प्रभु सत्ता सम्पन्न होन वाली थी। इसके अनुसार उन्हें यह अधिकार प्राप्त था कि वे चाहे तो स्वतन्त्र रहे या भारत व पाकिस्तान किसी भी अधिराज्य मे स्वय को विलय कर लें या उनके साथ जैसी चाहे वैसी सधि कर ले। किन्तु सधि करन या अधिराज्य म विलय होने के लिए यह शत अनिवार्य थी कि सधि करने वाली रियासत और उस अधिराज्य की भौगोलिक सीमायें कही न कही, आपस मे एक दूसरे को छू अवश्य रही हो।

भारतीय अधिराज्य की सावभौम सत्ता कांग्रेस दल को प्राप्त होने जा रही थी और काग्रेस के सन १९३३ के समाजवादी प्रस्ताव के कारण भारतीय सघ मे रियासतो का अस्तित्व सदिग्ध ही था। रियासतो को अपना स्वतन्त्र अस्तित्व बनाये रखना असम्भव सा ही प्रतीत हो रहा था, इसलिए देशी रियासतो के नरेशो की मनस्थिति बडी डांवाडोल थी।

पाकिस्तान के भावी गवनर जनरल श्री मुहम्मद अली जिन्ना ने नरेशों की इस उलझन को समझ लिया। उन्होंने परिस्थिति का लाभ उठाने के लिए देशी नरेशों को यह प्रलोभन दिया कि पाकिस्तान से सधि करने के लिए व (देशी नरेश) जो शर्तें चाहे रख लें। पाकिस्तान उन शर्तों को उसी रूप मे स्वीकार कर लेगा।

५६५ रियासतों म से केवल ११ रियासतें तो भौगोलिक सीमा की शत के अनुसार भारत से कोई सधि कर ही नही सकती थी। उन्हें तो पाकिस्तान के साथ ही सधि करना अनिवाय था। शेष ५५४ रियासतो म से कुछ इनी गिनी रियासतें ऐसी थी जो ब्रिटिश भारत के बीच म स्थित थीं। व

पाकिस्तान से संधि नहीं कर सकती थीं। शेष लगभग साढ़े पाँच सौ रियासतों की शृंखला स्वस्तिक के आकार में भारत के हृदय में फैली हुई थी। यह शृंखला पाकिस्तान की सीमा को कई स्थानों पर छू रही थी। यदि सीमा की रियासतें पाकिस्तान से कोई संधि करतीं तो उन रियासतों की सीमा से छूती हुई रियासतों को पाकिस्तान से संधि करने के द्वार खुल जाते। इस प्रकार इन रियासतों की पूरी शृंखला पाकिस्तान के साथ संधि कर सकती थी।

श्री मुहम्मद अली जिन्ना द्वारा दिए गए प्रलोभनों में फँस कर कुछ नरेश पाकिस्तान से संधि करने को उत्सुक भी हुए, किन्तु अधिकांश नरेशों का यही मत था कि ६०० वर्षों की परतन्त्रता के अंधकार में रहने के बाद, भारत में स्वतन्त्रता का सूर्य उदय होने जा रहा है। हम उस सूर्य के उज्ज्वल प्रकाश से वंचित रह कर, अपने थोड़े से स्वार्थ के लिए यदि पाकिस्तान से किसी भी प्रकार की संधि कर लेते हैं, तो वह अपनी प्रिय जनता एवं अपने महान् राष्ट्र भारत के प्रति घोर विश्वासघात होगा। अतः बिना यह सोचे कि हमारा भविष्य क्या होगा उन्होंने यह निश्चय किया कि अपनी प्रिय जनता की भावनाओं का सम्मान करते हुए एवं उसके हित में हमें जो भी संधि करना है वह अपने प्रिय राष्ट्र भारत के साथ ही करनी है।

ब्रिटिश राजनीतिज्ञ कूप लैंड ने उचित ही कहा था 'यद्यपि भारत के पश्चिमी और पूर्वी अंगों को काट दिया गया है तो भी वह जीवित रह सकता है, किन्तु देशी राज्यों रूपी अपने हृदय के बिना भी क्या वह जीवित रह सकेगा ?'

भारतीय नेता भी देशी नरेशों की इन उलझनों तथा पाकिस्तान द्वारा उन्हें दिए गए प्रलोभनों से भली भाँति परिचित थे। अतः भारत के भावी गृह मन्त्री एवं दक्ष राजनीतिज्ञ सरदार वल्लभ भाई पटेल ने संयुक्त भारत के तत्कालीन वायसराय लार्ड माउंटबेटन की अध्यक्षता में, ५ जुलाई सन् १९४७ को देशी नरेशों की एक सभा दिल्ली में बुलाई और कहा 'हम देशी राज्यों से केवल तीन चीजें चाहते हैं—सुरक्षा, संचार एवं विदेश नीति। शेष सभी बातों में भारतीय रियासतें स्वतन्त्र रहेंगी। इसके लिए उन पर न तो कोई अधिकार ही पड़ेगा और न उन्हें किसी तरह से दबाया ही जायेगा।

केवल हैदराबाद और कश्मीर को छोड़कर शेष ५५२ रियासतों के नरेशों ने इसे सहर्ष स्वीकार कर लिया और वे सब भारतीय अधिराज्य के साथ एक विशेष संधि में बँध गए। इस प्रकार १५ अगस्त सन् १९४७ को स्वतन्त्रता

के प्रभात म, ये रियासतें भारतीय अधिराज्य के साथ रहती हुई भी अपना अस्तित्व स्वतन्त्र ही रख रही थीं।

भारतीय स्वतन्त्रता के अरुणोदय का प्रकाश जब समस्त भूमडल पर फैल गया तथा भारतीय जनता मे एक नई राष्ट्रीय चेतना आई, तब भारत के गृह मन्त्री सरदार वल्लभ भाई पटेल को दृष्टिगोचर हुआ कि देशी राज्यो की भारतीय जनता उन सभी आर्थिक, सामाजिक एव लोकतान्त्रिक लाभो से वचित रह जायेगी, जो शेष भारतीय जनता को प्राप्त होने जा रहे हैं। अत उन्होने इन बातो को भारतीय नरेशो के सम्मुख रखा। राष्ट्रीय भावना से ओत प्रोत नरेशो ने सरदार पटेल की इस बात को भी मान कर अपनी-अपनी रियासतो को भारतीय सघ मे विलय करना स्वीकार कर लिया।

नई उम्र मे हर अच्छी बुरी बात के लिए एक उत्साह होता है। महाराजा समर सिंह अभी लडके ही थे। कदाचित यही कारण हो कि उनमे राष्ट्रीयता का उत्साह कुछ अधिक ही था। उन्होने बिना किसी आना कानी के अपनी रियासत का भारतीय सघ मे विलीनीकरण तत्काल ही स्वीकार कर लिया तथा सबमे पहले विलीनीकरण के सन्धि पत्र पर हस्ताक्षर कर दिये। इस तरह किशनगढ़ रियासत १ मई सन १९४८ को भारत सघ में विलीन हो गई।

# सविलयन अनुवन्ध एव प्रसविदाएँ

## भारत सरकार से समझौता

जसे-जसे भारतीय रियासतो के नरेश अपनी-अपनी रियासतो का भारतीय सघ मे सविलयन (विलीनीकरण) कराने के लिए सविलयन प्रालखो (Instruments of Accession) पर हस्ताक्षर करते गए वसे ही वसे भारत सरकार भी उन नरेशो से साथ अनुबन्ध या प्रसविदाएँ (समझौते) करके इन सविलयन प्रालेखो की पुष्टि करती गई।

किशनगढ नरेश महाराजा सुमेर सिंह के अतिरिक्त तत्कालीन राजपूताना के अन्य नौ नरेशो ने भी, लगभग उन्ही दिनो म अपनी अपनी रियासता के भारत सघ मे सविलन की सहमति प्रदान की थी। अत भारत सरकार ने किशनगढ सहित दस राज्यो के नरेशो से एक साथ ही अनुबन्ध (प्रसविदा) किया तथा उस अनुबन्ध पर भारत सरकार की ओर से सरकार के प्रतिनिधि श्री० वी० पी० मैनन व सविलय होने वाली रियासतो के नरेशा के हस्ताक्षर हुए—

## प्रसविदा (अनुबन्ध)

### बासवाडा, बूदी, डूगरपुर, झालावाड, किशनगढ, कोटा, मारवाड, प्रताप गढ, शाहपुरा और टोक

के शासको ने राजस्थान का सयुक्त राज्य के पुनर्निर्माण हेतु यह प्रसविदा की।

अतएव बाँसवाडा, बूँदी, डूगर पुर, झालावाड, किशनगढ कोटा, प्रतापगढ शाहपुरा और टोक के शासक एक प्रसविदा द्वारा इस पर सहमत हुए कि उपयुक्त नौ रियासता का एकीकरण करके राजस्थान का सयुक्तराज्य नाम से एक राज्य बना दिया जाय।

और इस विचार से उपरिलिखित नौ रियासतो के शासक और मेवाड के शासक इस पर सहमत हुए कि उपरिलिखित राजस्थान के सयुक्त राज्य का पुर्ननिर्माण इन सभी दस रियासतो के एकीकरण से किया जाये।

पूर्व कथित शासक इस रीति से समझौते की इस श्रेष्ठ सभा मे भारत सरकार की सहमति एव गारटी पर यह प्रसविदा करते हैं —

## धारा १

इस प्रसविदा मे —

(अ) प्रसविदाकारी रियासत का अर्थ है उपरिलिखित दस रियासतो— बासवाडा, बूँदी डूँगरपुर, झालावाड, किशनगढ, कोटा, मेवाड, प्रताप गढ, शाहपुरा और टोंक मे से कोई रियासत, और

(ब) जब तक कोई बात इसके प्रतिकूल नही होती इस विषय मे या इस सन्दर्भ म किसी रियासत के शासक का उल्लेख करते समय वह एक व्यक्ति या कई व्यक्ति भी सम्मिलित हैं, जिन्हें शासक की अल्पावस्था या अन्य किसी कारण से अस्थायी रूप म शासनाधिकार प्राप्त हैं।

## धारा २

(१) प्रसविदाकारी रियासतें सहमत हैं —

(अ) अपनी रियासतो का एकीकरण करके राजस्थान का सयुक्त राज्य नाम से एक राज्य बनाने के लिये—जिसमे सवमान्य शासन व्यवस्था, व्यवस्थापिका सभा और न्यायालय हो। तदुपरान्त (भविष्य मे) यह प्रदेश सयुक्त राज्य के नाम से सम्बोधित होगा, और

(ब) इस प्रकार स्थापित सयुक्त राज्य मे किसी ऐसी अन्य रियासत को भी सम्मिलित करने के लिए, जिसका शासक भारत सरकार की स्वीकृति से अपनी रियासत को राजस्थान के सयुक्त राज्य म सविलय कराने के लिए सहमत होता है।

(२) इस प्रकार सविलयन के किसी भी समझौते की शर्तों के लिए इस धारा के खड (१) की उप धारा (ब) के अनुसार सयुक्त राज्य बाध्य होगा और वह समझौता इस प्रसविदा का ही एक भाग समझा जायेगा।

## धारा ३

(१) इस राज्य में एक परिषद होगी जिसके सदस्य सभी प्रसंविदाकारी रियासतें होंगी।

किन्तु शर्त यह है कि कोई शासक, जिसकी आयु २१ वर्ष से कम होगी इस परिषद का सदस्य न हो सकेगा।

(२) मेवाड़, कोटा बूंदी और डूंगरपुर के शासक परिषद के क्रमानुसार प्रथम सभापति ज्येष्ठ उप सभापति और कनिष्ठ उप सभापति होंगे और १८ अप्रैल सन १९४८ से अपने क्रमानुसार पदों पर कार्य आरम्भ कर देंगे। कथित सभापति अपने पद पर अपने जीवन काल तक बने रहने के अधिकारी होंगे और कथित दोनों उप सभापतियों का कार्यकाल उपरोक्त तारीख से ५ वर्ष के लिए होगा।

(३) जब कभी खंड (२) से सम्बन्धित कोई स्थान रिक्त होने वाला होगा शासकों की परिषद अपनी सभा में उस रिक्त स्थान की पूर्ति के लिए परिषद के सदस्यों में से किसी एक का निर्वाचन कर लेगा। निर्वाचित सदस्य अपने पद ग्रहण की तारीख से ५ वर्ष तक पदासीन रहेगा।

जो शासक जितने समय तक परिषद का सभापति रहेगा वह उस समय तक संयुक्त राज्य का राज प्रमुख भी रहेगा।

## धारा ४

(१) वर्तमान राज प्रमुख को उनके पद के कार्यकाल में पुष्टि भत्ता (Consolidated allowance) के रूप में संयुक्त राज्य के राजस्व से पाँच लाख रुपया वार्षिक मिलता रहेगा जिससे कि वह अपने पद की प्रतिष्ठा के अनुरूप सुगमतापूर्वक अपना कर्त्तव्य पालन कर सकें।

(२) यदि राज प्रमुख अनुपस्थिति के कारण या रुग्णता अथवा अन्य किसी कारण से अपने पद के कर्त्तव्य पालन में अयोग्य होते हैं तो यह कर्त्तव्य (Duty) उनके पुनः कर्त्तव्य (Duty) ग्रहण करने तक शासकों की परिषद के ज्येष्ठ उप सभापति पूरा करेंगे। इस प्रकार के कार्यकाल में ज्येष्ठ उप सभापति उस पुष्टि भत्ता को (Consolidated allowance) प्राप्त करने के अधिकारी होंगे।

## धारा ५

(१) धारा ७ के खण्ड २ के अतिरिक्त राजप्रमुख के सभी कार्यों मे सहयोग एव राय देन के लिए एक मन्त्रि परिषद होगी ।

(२) मन्त्रियो का चयन किया जायगा और जब तक राज प्रमुख की इच्छा होगी तब तक ही व अपने पदो पर पदासीन रह सकेंगे ।

## धारा ६

(१) प्रत्येक प्रसविदाकारी रियासत का शासक यथा सम्भव शीघ्रता से और किसी भी रूप म १ मई सन १९४८ से अधिक देर म नही अपने राज्य का शासन प्रबन्ध राजप्रमुख को हस्तान्तरित कर देगा ।

और उसी समय से—

(अ) शासक के सारे अधिकार प्रभुत्व, अधिकार क्षेत्र, जो इसस सम्बन्धित हैं या जो प्रसविदाकारी रियासत की सरकार को सहसा प्राप्त हुए ह वे सब सयुक्त राज्य के अधिकार क्षेत्र म आ जायेंगे और उसके बाद इस प्रसविदा द्वारा दिए गये या बनने वाले सविधान के अनुसार प्राप्त अधिकार ही उनके द्वारा प्रयोग म आ सकेंगे ।

(ब) शासक के सारे कर्त्तव्य वैधानिक या नैतिक बन्धन जो प्रसविदा कारी रियासत की सरकार क सम्बन्धित हैं या सहसा उसे प्राप्त हैं, वे सब सयुक्त राज्य के अधिकार म आ जायगे और इसके (सयुक्त राज्य के) द्वारा पूरे किय जायेंगे, और

(स) प्रसविदाकारी रियासत की समस्त पूँजी और उत्तरदायित्व सयुक्त राज्य की पूँजी और उत्तरदायित्व बन जायेंग ।

(२) जब इस प्रकार क किसी समझौते या सविदाय के अनुसरण म जैसा कि धारा (२) क खण्ड (१) की उपधारा (ब) म निर्देशित है कोई अन्य रियासत अपनी शासन व्यवस्था राजप्रमुख का हस्तान्तरित करती है तो इस सम्बन्ध म इस धारा के खड (१) की उपधाराएँ (अ), (ब) और (स) उस रियासत पर भी वैसे ही लागू होगी जसे कि प्रसविदा करने वाली रियासत के सम्बन्ध म लागू हैं ।

## धारा ७

(१) प्रत्येक प्रसविदाकारी रियासत की सनिक शक्ति, यदि उसके पास कुछ भी है राज प्रमुख को हस्तान्तरित करने की तारीख से ही सयुक्त राज्य की सनिक शक्ति हो जायेगी।

(२) किसी भी निर्देश या आज्ञा के अनुसार जो समय समय पर भारत सरकार द्वारा सयुक्त राज्य की सनिक शक्ति को उन्नत करने, सचालन और प्रब ध करने के लिए दी गई हो उसकी ओर से केवल राज प्रमुख का ही अधिकार प्राप्त होगे।

ऐसा होने पर भी इस धारा मे राजप्रमुख पर ऐसा कोई प्रतिब ध नही होगा जो उन्हें उपयु क्त विषयो से सम्ब धित किसी बात पर मन्त्रि परिषद से सलाह करने से रोक सके।

## धारा ८

जितना शीघ्र सम्भव हो सकेगा उतना शीघ्र, किन्तु हर स्थिति मे १ जून सन १९४८ तक राजप्रमुख सयुक्त राज्य की ओर से प्रसविदाकारी रियासतो द्वारा किए गए पथक पथक सविलयन प्रलेखो के स्थान पर एक सविलयन प्रलेख पूरा करायेंगे, जो भारत सरकार के सन १९३५ मे कानून के खण्ड ६ के नियमो के अनुसार होगा और वह (राजप्रमुख) इस प्रकार के प्रलेख द्वारा ऐसे विषयो को स्वीकार कर सकते हैं जिनके द्वारा राज्य की व्यवस्थापिका सभा सयुक्त राज्य के लिए रियासतो द्वारा सविलयन प्रलेखो म निर्दिष्ट विषयो के अतिरिक्त भी कि ही विषयो मे कानून बना सके।

## धारा ९

इस प्रसविदा के नियमो के विषय मे और बनने वाले सविधान के अनुसार सयुक्त राज्य के शासन सम्ब धी अधिकार राजप्रमुख द्वारा या तो प्रत्यक्ष रूप मे या अपने अधीनस्थ अधिकारियो द्वारा प्रयोग मे लाये जायेंगे। किन्तु इस धारा मे सयुक्त राज्य की उचित व्यवस्थापिका सभा पर ऐसा कोई प्रतिब ध नही होगा जो इसके अधीनस्थ अधिकारियो के प्रति उसके प्रतिपादित काय को रोक सके या वतमान कानून के अनुसार प्रसविदाकारी रियासत म किसी कार्यालय न्यायाधीश, अफसर या स्थानीय अधिकारी के प्रति राजप्रमुख को अपने प्राप्त अधिकारों से वचित कर सके।

## धारा १०

(१) अनुसूची २ (Schedule II) मे बतलाई गई रीति के अनुसार यथासम्भव शीघ्रता से एक संविधान सभा निर्मित की जायेगी।

(२) उपयुक्त सभा का यह कर्तव्य होगा कि वह इस प्रसंविदा के निर्माण कार्य और भारतीय संविधान के अनुसार सयुक्त राज्य के लिए एक संविधान की रचना करे जिसके (संविधान) अनुसार सरकार व्यवस्थापिका सभा के प्रति उत्तरदायी होगी।

(३) जब तक इस प्रकार का संविधान कार्य नही करता है तब तक राजप्रमुख की स्वीकृति से सयुक्त राज्य की व्यवस्थापिका सभा के अधिकार राजप्रमुख मे निहित रहेगे जो सयुक्त राज्य की सरकार मे शांति एवं व्यवस्था के लिये अध्यादेश बना कर घोषणा कर सकते है। इस प्रकार घोषित अध्यादेश या उस अध्यादेश का कोई भाग सयुक्त राज्य की व्यवस्थापिका सभा द्वारा पारित कानून के समान ही शक्तिशाली समझा जायगा।

## धारा ११

(१) प्रत्येक प्रसंविदाकारी रियासत के शासक को सयुक्त राज्य के राजस्व से प्रतिवर्ष अपने प्रिवीपर्स के रूप मे उतनी राशि लेने का अधिकार होगा जितनी कि अनुसूची (१) मे उस प्रसंविदाकारी रियासत के नाम के सामने लिखी गई है।

(२) उपरिलिखित धन राशि देने का लक्ष्य यह है कि शासक तथा उसके परिवार के समस्त खर्च इससे चलते रहें। इन खर्चों मे परिवार के निवास स्थानों की देख रेख परिवार मे होने वाले विवाह तथा मनाये जाने वाले अन्य उत्सवों के खर्चे भी सम्मिलित हैं। यह धन राशि किसी भी कारण से न तो बढ़ाई जा सकती है और न घटाई जा सकती है।

(३) यह राजप्रमुख का उत्तरदायित्व है कि वह उपरिलिखित धन राशि चार समान किश्तों मे शासक को प्रत्येक तिमाही के आरम्भ मे अग्रिम रूप से दे दें।

(४) उक्त धन राशि समस्त करों से मुक्त होगी, चाहे वे सयुक्त राज्य की सरकार ने लगाए हों या भारत सरकार ने।

## धारा ७

(१) प्रत्येक प्रसंविदाकारी रियासत की सैनिक शक्ति, यदि उसके पास कुछ भी है राज प्रमुख को हस्तान्तरित करने की तारीख से ही संयुक्त राज्य की सैनिक शक्ति हो जायेगी।

(२) किसी भी निर्देश या आज्ञा के अनुसार जो समय समय पर भारत सरकार द्वारा संयुक्त राज्य की सैनिक शक्ति को उन्नत करने, सञ्चालन और प्रबन्ध करने के लिए दी गई हो उसकी ओर से केवल राज प्रमुख का ही अधिकार प्राप्त होगे।

ऐसा होने पर भी इस धारा में राजप्रमुख पर ऐसा कोई प्रतिबन्ध नहीं होगा जो उन्हें उपयुक्त विषयों से सम्बन्धित किसी बात पर मन्त्रि परिषद् से सलाह करने से रोक सके।

## धारा ८

जितना शीघ्र सम्भव हो सकेगा उतना शीघ्र, किन्तु हर स्थिति में १ जून सन १९४८ तक राजप्रमुख संयुक्त राज्य की ओर से प्रसंविदाकारी रियासतों द्वारा किए गए पृथक पृथक संविलयन प्रालेखों के स्थान पर एक संविलयन प्रालेख पूरा करायेंगे जो भारत सरकार के सन १९३५ के कानून के खण्ड ६ के नियमों के अनुसार होगा, और वह (राजप्रमुख) इस प्रकार के प्रालेख द्वारा ऐसे विषयों को स्वीकार कर सकते हैं जिनके द्वारा राज्य की व्यवस्थापिका सभा संयुक्त राज्य के लिए रियासतों द्वारा संविलयन प्रालेखों में निर्दिष्ट विषयों के अतिरिक्त भी किन्ही विषयों में कानून बना सके।

## धारा ९

इस प्रसंविदा के नियमों के विषय में और बनने वाले संविधान के अनुसार संयुक्त राज्य के शासन सम्बन्धी अधिकार राजप्रमुख द्वारा या तो प्रत्यक्ष में या अपने अधीनस्थ अधिकारियों द्वारा प्रयोग में लाये जायेंगे। किन्तु इस धारा में संयुक्त राज्य की उचित व्यवस्थापिका सभा पर ऐसा कोई प्रतिबन्ध नहीं होगा जो इसके अधीनस्थ अधिकारियों के प्रति उसके प्रतिपादित कार्य को रोक सके या वर्तमान कानून के अनुसार प्रसंविदाकारी रियासत में किसी कार्यालय, न्यायाधीश अफसर या स्थानीय अधिकारी के प्रति राजप्रमुख के अपने प्राप्त अधिकारों से वंचित कर सके।

## धारा १०

(१) अनुसूची २ (Schedule II) मे बतलाई गई रीति के अनुसार यथासम्भव शीघ्रता स एक सविधान सभा निर्मित की जायेगी।

(२) उपयुक्त सभा का यह कर्त्तव्य होगा कि वह इस प्रसविदा के निर्माण काय और भारतीय सविधान के अनुसार सयुक्त राज्य के लिए एक सविधान की रचना करे जिसके (सविधान) अनुसार सरकार व्यवस्थापिका सभा के प्रति उत्तरदायी होगी।

(३) जब तक इस प्रकार का सविधान काय नही करता है तब तक राजप्रमुख की स्वीकृति स सयुक्त राज्य की व्यवस्थापिका सभा के अधिकार राजप्रमुख मे निहित रहगे, जो सयुक्त राज्य की सरकार मे शाति एव व्यवस्था के लिये अध्यादेश बना कर घोषणा कर सकते है। इस प्रकार घोषित अध्यादेश या उस अध्यादेश का कोई भाग सयुक्त राज्य की व्यवस्थापिका सभा द्वारा पारित कानून के समान ही शक्तिशाली समझा जायगा।

## धारा ११

(१) प्रत्यक प्रसविदाकारी रियासत के शासक को सयुक्त राज्य के राजस्व से प्रतिवष अपने प्रिवीपर्स के रूप म उतनी राशि लेने का अधिकार होगा जितनी कि अनुसूची (१) म उस प्रसविदाकारी रियासत के नाम के सामने लिखी गई है।

(२) उपरिलिखित धन राशि देने का लक्ष्य यह है कि शासक तथा उसके परिवार के समस्त खर्च इससे चलते रहें। इन खर्चों मे परिवार के निवास स्थानों की देख रेख, परिवार म होने वाले विवाह तथा मनाये जाने वाले अन्य उत्सवों के खर्चे भी सम्मिलित हैं। यह धन राशि किसी भी कारण से न तो बढ़ाई जा सकती है और न घटाई जा सकती है।

(३) यह राजप्रमुख का उत्तरदायित्व है कि वह उपरिलिखित धन राशि चार समान किश्तो म शासक को प्रत्यक तिमाही के आरम्भ म अग्रिम रूप स दे दें।

(४) उक्त धन राशि समस्त करों से मुक्त होगी, चाहे व सयुक्त राज्य की सरकार ने लगाए हो या भारत सरकार ने।

## धारा १२

(१) प्रत्येक प्रसविदाकारी रियासत के शासक को अपनी समस्त निजी सम्पत्ति पर (जोकि रियासत की सम्पत्ति से अलग है) जिस पर उस राज्य की शासन व्यवस्था राजप्रमुख को हस्तान्तरित करने के दिन शासक का अधिकार था, उसके प्रयोग एवं उपयोग के लिये शासक को स्वामित्व के पूर्ण अधिकार प्राप्त होंगे।

(२) १ मई सन १९४८ से पहले वह (प्रसविदाकारी रियासत के शासक) अपनी समस्त चल और अचल सम्पत्ति, प्रतिभूति (Securities) और नकद बची हुई धन राशि, जो निजी सम्पत्ति के रूप में उनके अधिकार में है, इनकी विवरण सूची राजप्रमुख को प्रस्तुत करेंगे।

(३) यदि कोई ऐसा विवाद उत्पन्न होता है कि अमुक सम्पत्ति शासक की निजी सम्पत्ति है या रियासत की सम्पत्ति है तो उस विवाद का निर्णय करने के लिये भारत सरकार एक व्यक्ति को नियुक्त करेगी इस व्यक्ति का निर्णय अंतिम होगा और इस विवाद से सम्बंधित सभी व्यक्ति निर्णय को मानने के लिए बाध्य होंगे।

शर्त यह है इस प्रकार के किसी भी विवाद पर १ मई १९४९ के बाद कोई निर्णय नहीं लिया जायेगा।

## धारा १३

प्रत्येक प्रसविदाकारी रियासतके शासक तथा उसके परिवार के सदस्यों के व्यक्तिगत अधिकारों विशेषाधिकारों आदर सम्मान तथा उपाधि पदों में किसी प्रकार का अन्तर नहीं आएगा। ये चीजें १५ अगस्त सन १९४७ के एक दिन पहले जिस रूप में थी भविष्य में भी यथावत बनी रहेंगी।

## धारा १४

(१) कानून एवं रीति रिवाज के अनुसार प्रत्येक प्रसविदाकारी रियासत की गद्दी के उत्तराधिकार और शासक के व्यक्तिगत अधिकारों विशेषाधिकारों मान सम्मान एवं उपाधियों की गारंटी दी जाती है।

(२) प्रसविदाकारी रियासत के विवादग्रस्त उत्तराधिकारी का हर प्रश्न शासकों की परिषद द्वारा संयुक्त राज्य के उच्च न्यायालय की राय के लिये

भेजा जायेगा और उच्च न्यायालय की राय के अनुसार ही शासकों की परिषद इस पर अपना निर्णय देगी।

## धारा १५

संयुक्त राज्य द्वारा या उसके अधिकारी द्वारा कोई जाँच नहीं की जायेगी, और किसी प्रसंविदाकारी रियासत के शासक के विरुद्ध संयुक्त राज्य की किसी अदालत में कोई मुकदमा नहीं चलाया जा सकेगा। चाहे यह मुकदमा व्यक्तिगत आधार पर हो या किसी दूसरे प्रकार का हो, जिसमें प्रसंविदाकारी रियासत के अपने शासन काल में उसने (शासक ने) अपने अधिकार से कुछ भी किया हो या कुछ भी करने से छोड़ दिया हो।

## धारा १६

(१) प्रत्येक प्रसंविदाकारी रियासत के स्थायी सरकारी कर्मचारियों के लिये संयुक्त राज्य यह गारण्टी करता है —या तो उनकी सेवायें इस शर्त पर निरन्तर जारी रखी जायेंगी कि १ फरवरी सन् १९४८ को वे जिन शर्तों पर काम कर रहे थे उनसे ये नई शर्तें कम लाभकारी नहीं होंगी या उन्हें उचित मुआविजा दे दिया जायेगा।

(२) संयुक्त राज्य आगे यह गारन्टी करता है कि प्रसंविदाकारी रियासतों के सरकारी कर्मचारियों की पेन्शनों को जारी रखा जायगा और छुट्टियों का वेतन जो उचित अधिकारियों द्वारा प्रमाणित किया गया हो। जो व्यक्ति राजप्रमुख को रियासत का शासन हस्तांतरित किये जाने वाली तारीख से पहले अवकाश प्राप्त कर चुके हैं या अवकाश प्राप्त करने की प्रारम्भिक (Prepara tory leave to retirement) छुट्टी पर चले गये है, ऐसे सभी व्यक्ति पेंशन पाते रहेंगे।

(३) इस धारा के खण्ड (१) और (२) के नियम राजपूताना की किसी भी ऐसी दूसरी रियासत के सरकारी कर्मचारियों के सम्बन्ध में भी लागू होंगे, जिनका संविलयन राजस्थान के संयुक्त राज्य में होगा।

## धारा १७

राजप्रमुख की पूर्व आज्ञा के बिना किसी प्रसंविदाकारी रियासत के ऐसे व्यक्ति के किसी कार्य के विरुद्ध जिसने राजप्रमुख को शासन हस्तान्तरित की

जाने वाली तारीख से पहले रियासत के कर्मचारी के रूप में अपना कर्तव्य पूरा करने के लिए कोई काम किया हो या काम करने का उसका तात्पर्य रहा हो, दीवानी या फौजदारी का कोई मुकदमा नहीं चलाया जा सकेगा।

## धारा १८

इस प्रतिविज्ञ में ऐसा कुछ नहीं समझा जायेगा जो संयुक्त राज्य की सरकार पर राजपूताना की किसी दूसरी रियासत से बातचीत करके राजस्थान संघ में मिलने की बात तय करने पर प्रतिबन्ध लगाये। यह बातचीत उन शर्तों और दशाओं पर की जायगी जिससे राजस्थान के शासकों की परिषद् और साथ ही मंत्रियों की परिषद् सहमत होगी।

## अनुसूचि १

प्रसंविदाकारी रियासतें और प्रिवीपर्स की धनराशि

| | | रुपया |
|---|---|---|
| १ | बाँसवाड़ा | १,२६,००० |
| २ | बूँदी | २,८१,००० |
| ३ | डूंगरपुर | १,९८,००० |
| ४ | झालावाड़ | १,३६ ००० |
| ५ | किशनगढ़ | १,३६ ००० |
| ६ | कोटा | ७,००,००० |
| ७ | मेवाड़ | १०,००,००० |
| ८ | प्रतापगढ़ | १ ०२,००० |
| ९ | शाहपुरा | ९०,००० |
| १० | टोंक | २ ७८ ००० |

## अनुसूची २

राजस्थान संविधान सभा के सम्बन्ध में नियम

(१) संविधान सभा में संयुक्त राज्य की जनता के ४५ निर्वाचित प्रतिनिधियों से अधिक नहीं होंगे। प्रतिनिधित्व का आधार लगभग एक लाख

की जनसख्या पर एक प्रतिनिधि होगा और विशेष रुचि का प्रतिनिधित्व करने के लिये राजप्रमुख द्वारा ६ व्यक्तियो से अधिक नामाकित नही किय जायेंगे।

(२) सयुक्त राज्य को प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रो म विभाजित किया जायेगा, और निर्वाचित होने वाले स्थानो की पूरी सख्या को यह निर्दिष्ट करके उनमे बाँट दिया जायेगा कि सुविधा के अनुसार प्रत्येक निर्वाचित क्षेत्र म एक या दो स्थान हो।

(३) सभा की सदस्यता के लिये और चुनाव सम्बधी नामावली मे नाम सम्मिलित करने के लिय योग्यता वैसी ही होगी जसी कि सयुक्त प्रात (U P) की प्रातीय व्यवस्थापिका सभा (Provincial Legislative Assembly) के सम्बध म नियमानुसार निर्दिष्ट है, इसमे आवश्यक सशोधन भी हो सकत हैं।

(४) राजप्रमुख द्वारा उचित समय पर एक आना निकाल कर दृढ़ता के साथ यह बतलाते हुये घोषणा की जायगी कि इस अनुसूची म आगे नियमो के लिये—

(अ) निर्वाचन क्षेत्रो की सीमा का निर्धारण

(ब) चुनाव सम्बधी नामावली का निर्माण,

(स) सभा की सदस्यता क लिये योग्यता,

(द) चुनाव म मतदाताओ की योग्यता,

(च) चुनावो का प्रबध, अकस्मात रिक्त होने वाले स्थानो को भरने के लिये उप चुनावो सहित,

(छ) ऐसे चुनावो मे या इनसे सम्बधित भ्रष्ट आचरण और

(ज) इन चुनावो के सम्बध म उत्पन्न होने वाल सदेहो और विवादो का निणय।

ऊपर लिखी गइ प्रसविदा की पुष्टिकरण के लिये स्वय अपनी, अपने उत्तराधिकारियो और वारिसों की ओर से हम अपन हस्ताक्षर इस प्रसविदा मे जोडते हैं।

बाँसवाडा के महारावल
बूँदी के महाराव राजा
डूँगर पुर के महारावल
झालावाड के महाराज राणा

किशनगढ़ के महाराजा

कोटा के महाराव

मेवाड के महाराणा

प्रताप गढ के महारावत

शाहपुरा के राजा

टोंक के नवाब

इस रीति मे भारत सरकार उपरिलिखित प्रसंविदा मे समागम करती है और इसके सब नियमों की गारन्टी करती है। जिसके पुष्टिकरण के लिये भारत सरकार से अधिकार प्राप्त करके भारत सरकार की ओर से रियासत मंत्रालय मे भारत सरकार के सचिव मिस्टर वापल पानगुन्नी मनन इस प्रसंविदा मे अपने हस्ताक्षर जोडते हैं।

हस्ताक्षर— वी० पी० मनन
15–4–48
भारत सरकार के सचिव
रियासत मन्त्रालय

## रियासत का योगदान

भारतीय राष्ट्र मे रियासत के सविलयन के समय किशनगढ राज्य ने राष्ट्र को ८५८ वर्ग मील का भू भाग दिया, जिसकी आय १८ लाख रुपया वार्षिक थी। इसके अतिरिक्त सरकारी खजाने मे कई लाख रुपया था। यह रुपया और कई भवन भी राष्ट्र को अर्पित किये। उनमे मे से एक भवन मदन निवास कोठी मे आज यज्ञनारायण सिंह सरकारी अस्पताल है।

# विवाह

पाश्चात्य सभ्यता म विवाह भले ही शारीरिक आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए स्त्री-पुरुष के बीच एक 'काट्रेक्ट (समझौता) मात्र ही समझा जाता हो किन्तु भारतीय संस्कृति के अनुसार यह एक पवित्र संस्कार है। इसके द्वारा स्त्री पुरुष गृहस्थाश्रम मे प्रवेश करके अपने सांसारिक उत्तरदायित्वो को पूरा करते हैं।

जिस प्रकार माता पिता का कत्तव्य अपने बच्चो का पालन-पोषण एव समुचित शिक्षा द्वारा उन्हें सफल जीवन यापन करने योग्य बनाना होना है, उसी प्रकार उनका एक उत्तरदायित्व यह भी है कि उचित समय पर अपने बच्चे का योग्य पात्र से विवाह करके सांसारिक क्षेत्र म उसका पदार्पण करा दें।

माता पिता के द्वारा निश्चित ब्राह्म रीति से विवाह पद्धति को ही हमारे पूवजो न सवश्रेष्ठ विवाह माना है इसीलिए यह पद्धत भारत म प्राचीन काल से ही सवत्र प्रचलित एव लोक प्रिय रही है। विवाह का उत्तरदायित्व स्वय पर नही, माता पिता एव अभिभावको पर होता है। यही भारतीय परम्परा है।

स्वाभाविक था कि समय आने पर बडी राजमाता जी हर हाईनस श्रीमती लक्ष्मी कुँवर भी अपने पुत्र सुमेर सिंह का विवाह किसी योग्य कन्या से ही करना चाहती थी। कई नरेशों ने अपनी पुत्रियो के लिए सुमेर सिंह से विवाह करने के प्रस्ताव भेजे। अन्त म राजमाता जी ने गुजरात की पालीताना रियासत के नरेश हिज हाईनस महाराजा श्री बहादुर सिंह जी की सुपुत्री राज कुमारी गीता कुमारी को सब प्रकार स सुमेर सिंह जी के योग्य पाकर विवाह सम्बध निश्चित कर दिया तथा ३ अक्टूबर सन १९४६ को किशनगढ राज

महल म टीके की रस्म पूरी की गई व १२ फरवरी सन् १६४७ को पालीताना राजमहल म चूनडी की रस्म हुई।

लगभग एक वष बाद किशनगढ और पालीताना राजवशो के लिए खुशिया का वह समय आया, जब दोनो राजमहलो मे आनन्द की लहरें उठने लगी। विवाह की धूम धाम होने लगी। दोनो राज्यो की जनता ने भी इस खुशी मे भरपूर भाग लिया तथा ३० जनवरी १६४८ को वह शुभ वेला आई जब दो जीवन राही प्रणय सूत्र म बँध कर एक ही नय्या पर बैठ इस ससार रूपी भव-सागर मे जीवन पथ पर अग्रसर हुए। किशनगढ से बारात पालीताना पहुँची, किशनगढ नरेश हिज हाईनैस उम्दये राजहाय बुल द मकान महाराजाधिराज महाराजा श्री सुमर सिह बहादुर वर के भेष मे पालीताना राजभवन म पधारे और वधू भेष म सुसज्जित राजकुमारी गीता कुमारी के साथ उनका पाणिग्रहण सस्कार किया गया तथा राजकुमारी गीता कुमारी का नया नाम हर हाईनस महारानी श्रीमती गीता कुमारी महारानी किशनगढ हो गया।

विधि के विधान को कौन जानता है? ३० जनवरी सन् १६४८ को ही, जिस दिन यह शुभ विवाह सस्कार सम्पन्न हुआ था, दिल्ली म राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी की हत्या कर दी गई और सारा राष्ट्र शोक मग्न हो कर अपने पूज्य नेता के निधन पर आँसू बहा रहा था। उस समय कौन जानता था, २१ वष के बाद आज के इस नव विवाहित दूल्हे का भी ऐसा ही अन्त होगा। इसकी भी इसी भाँति नृशस हत्या कर दी जाएगी। इसके राज्य की जनता भी इसके निधन पर इसी प्रकार आँसू बहायेगी।

# गृहस्थ जीवन

जीवन एक प्रवाह है, जो अविराम गति से बहता रहता है। गृहस्थाश्रम इस प्रवाह में एक तैरती नया के समान है जिसमें बैठे पति पत्नी दो नाविक के रूप में अपनी अपनी पतवारें लेकर उसे लक्ष्य की ओर सुचारु गति से खेते रहने का प्रयास करते हैं। दोनों में से किसी की भी पतवार टूट जाये या काम करना बन्द कर दे तो नैया का सन्तुलन बिगड़ जाता है। गति बदल सकती है। नया पथ से विचलित होकर किनारे से टकरा सकती है। टूट कर बिखर सकती है और डूब भी सकती है। इसलिए जीवन में लक्ष्य की ओर बढ़ते रहने के लिये गृहस्थ रूपी नया का सन्तुलन बनाए रख कर पति-पत्नी रूपी नाविकों की पतवारों का समान संचालन अति आवश्यक है।

कभी-कभी प्रवाह में भँवर पैदा होते हैं। बाढ़ें आती हैं तूफान उठते हैं और नैया को उत्ताल तरंगों के थपेड़े भी खाने पड़ते हैं। कभी कभी नैया नाविकों के प्रयास को विफल करके डगमगाने भी लगती है। फिर भी कुशल नाविक धैर्य के साथ उसे खेते रहने का कार्य चालू रखते हैं और नया को खतरों से बचा कर निकाल ले जाते हैं।

गृहस्थ जीवन के इस रहस्य को जो नव दम्पति आरम्भ से ही समझ कर चलते हैं उनके लिए जीवन पथ के शूल भी फूल बन जाते हैं। विपत्तियाँ अनुभव सिखाती हैं और दुःख केवल मानवता की कसौटी बन कर रह जाते हैं। और वह दम्पति उस कसौटी पर खरे उतरते हैं।

महाराजा सुमेर सिंह और महारानी गीता कुमारी का गृहस्थ जीवन बड़ा शान्तिमय, सुखी एवं आदर्शपूर्ण था। महारानी सही रूप में उनकी जीवन संगिनी और उनके कार्यों में अपना हाथ बँटा कर अपने अर्द्धांगिनी रूप के उत्तरदायित्वों को वास्तविक अर्थों में पूरा करती थी। वह शिकार में भी उनके साथ जाती थी। राजनैतिक एवं सामाजिक कार्यों में पूरा पूरा सहयोग देती थीं। पति पत्नी के मध्य प्रेम की अविरल बहती हुई धारा को देख कर उन्हें एक आत्मा और दो शरीर की ही उपमा दी जा सकती थी।

# चरित्र

मानव जीवन में चरित्र का बड़ा महत्त्व है। यदि हम इसकी सही व्याख्या करें तो इसका क्षेत्र बड़ा विस्तृत है। मनुष्य का हर विचार, उसका हर काम इस क्षेत्र की परिधि में आता है। मोटे तौर पर यह कहा जा सकता है कि मनुष्य का स्वभाव, रहन सहन, बातचीत, दूसरों के प्रति व्यवहार एवं उसके ये भाव जो समाज पर अपना प्रभाव डालते हैं सब चरित्र के अन्तर्गत ही आते हैं। मनुष्य में ये बातें जितनी अच्छी होती हैं वह मनुष्य उतना ही चरित्रवान कहा जा सकता है क्योंकि इन बातों में ही मनुष्य का सामाजिक व्यक्तित्व बनता है और सामाजिक व्यक्तित्व को ही दूसरे शब्दों में चरित्र की संज्ञा दी जा सकती है।

महाराजा गमर सिंह में कोई व्यसन नहीं था। वह धूम्रपान तक नहीं करते थे। मदिरापान से उन्हें घृणा थी। कितने ही मदिरा पायी व्यक्तियों से उन्होंने मदिरापान छुड़वा दिया था।

उनका रहन सहन बहुत सादा था। वह सहृदय, उदार एवं व्यवहार कुशल व्यक्ति थे। दूसरों के सुख-दुख की बात बड़े ध्यान से सुनते थे। उनके प्रति अपनी सहानुभूति प्रकट करते थे और जो कुछ उनसे बन पड़ता था उनकी सहायता भी करते थे।

छोटे बड़े हर व्यक्ति से उनका एक समान प्रेमपूर्ण व्यवहार था। उनका बातचीत करने का ढंग भी बड़ा मधुर एवं चित्ताकर्षक था। गर्व नाम की वस्तु तो उन्हें छू तक नहीं गई थी। ऊंच-नीच या छुआछूत को मानते नहीं थे। यदि उन्हें कभी किसी राज्य या ठिकाने के किसी सम्माननीय व्यक्ति के यहाँ जा कर उनसे मिलते हुए पाया जा सकता था तो उसी तरह हरिजन के घर में भी मौके पर वह देखा जा सकता था। उनके विरोधी भी उनके इस गुण की प्रशंसा किया करते थे।

महाराजा सुमेर सिंह के निरभिमान की एक छोटी सी घटना है —एक बार वह शिकार के लिए किसी जगल मे जा रहे थे। रास्ते मे उन्होने दो चरवाहो के लडको को आपस म लडते देखा तो उन्होने अपनी गाडी रोक कर उन दोनो को अपने पास बुलाया तथा उनसे लडने का कारण पूछा।

उन चरवाहो मे से एक ने बतलाया 'हुक्म ! हम दोनो को बडी जोर से भूख लग रही है। मैं इससे कहता हूँ कि पहले मैं घर जाकर रोटी खा आऊँ तब तक तू गायो की देख भाल करता रह। जब मैं घर से वापस आ जाऊँ तब तू रोटी खाने चला जाना। किन्तु यह कहता है, पहले मैं जाऊँगा, तू बाद मे जाना। इसी बात को लेकर हम दोनो मे झगडा हो रहा है कि पहले घर कौन जाय ?

उस चरवाहे की बात सुन कर महाराजा सुमेर सिंह ने उन दोनो से कहा, 'बस इतनी सी बात है। इस झगडे को मैं निबटाये देता हूँ—जाओ तुम दोनो ही एक साथ रोटी खाने चले जाओ। तब तक मैं तुम्हारी गायो की देखभाल करता रहूँगा।

जब तक वे ग्वाला के बालक अपने अपने घरो से रोटी खा कर वापस नही आ गये तब तक महाराजा सुमेर सिंह वही खडे खडे उनकी गायो की देख भाल करते रहे।

अपनी कार म जाते हुए, सडक पर यदि वह किसी ऐसे व्यक्ति को देख लेते जिसके साथ उनका थोडा सा भी परिचय होता तो वह कार रोक कर बडे प्रेम से उसे अपने पास बैठा लेते थे। कभी कभी तो उसे उसके गन्तव्य स्थान तक भी पहुँचा आते थे।

क्रोध करना तो वह जानते ही नही थे। अपने विरोधी के भी कन्धे पर हाथ रख कर बडे स्नेह से पूछते थे, भई ! तुम मुझ से नाराज क्यो हो ? बताओ तुम्हारी नाराजी कैसे दूर की जाय ? इस प्रकार शत्रु को भी मित्र बना लेना उनके बायें हाथ का खेल था। इसीलिये उन्हे विश्वास था कि उनका कोई शत्रु हो ही नही सकता।

नारी जाति के प्रति उनके हृदय म बडा सम्मान था। जब वह अपने भूतपूर्व राज्य किशनगढ के ग्रामो मे जाते थे तो ग्रामीण महिलाऐं बहुधा उनके सम्मान म नाच व गाने का आयोजन किया करती थी। कभी इच्छा न होने हुए भी वह उनके आग्रह को टाल नही पाते थे। यद्यपि उन नारियो की प्रसन्नता के लिये वह एक कला पारखी की भाँति उनका नृत्य देखते तथा उस

नत्य व सगीत की सराहना भी करते थे। किन्तु वास्तविकता तो यह है कि उनकी दृष्टि मे कौतूहल मिश्रित भोलेपन के अतिरिक्त और कुछ नही होता था।

चुनाव के दिनो म तो ग्रामीण महिलाओ ने एक गीत ही बना लिया था, जिसे वे बडे आत्म विश्वास के साथ मधुर स्वर लहरी म गाती थी—"धीरज राखले महाराणी थारा मनणा ने, रात का समझाऊँ म्हारा परण्यिाने' अर्थात् हे महारानी! तू अपने मन मे धीरज रख ले, मैं रात को अपने पति को समझा लूँगी' (कि वह अपना वोट महाराजा साहब को ही दें)।

अपन कार्यों एव मदुल स्वभाव से महाराजा सुमेर सिंह जी ने समाज मे अपना एक एसा विशिष्ट व्यक्तित्व बना लिया था कि लोग उनके चरित्र को एक आदश चरित्र मानने थे।



# धार्मिक आस्था

किशनगढ राजवश प्रारम्भ से ही वैष्णवी परम्परा मे पुष्टिमार्गीय वल्लभ कुल सम्प्रदाय का अनुयायी रहा है। भगवान कृष्ण इनके आराध्य देव हैं। कृष्ण के ही एक रूप भगवान् कल्याण राय जी और उनके बालस्वरूप नृत्य गोपाल जी का मन्दिर किले के भीतर है। यहां के राजा इन्ही भगवान् कल्याण राय जी को किशनगढ राज्य का वास्तविक राजा और स्वय को उनका दीवान मानते चले आये हैं।

महाराजा सुमेर सिंह जी भी भगवान् कल्याण राय के अनन्य भक्त थे। उन्हें अपने आराध्य देव म अगाध विश्वास था। जब वह किशनगढ मे रहते थे तब बहुधा भगवान् के दर्शनो को मदिर मे आते ही रहते थे। किशनगढ से कही बाहर जाते समय और बाहर से किशनगढ म आने के बाद तो भगवान् के चरणों म आराधना करना उनका एक अटूट नियम था।

वल्लभ कुल सम्प्रदाय के सस्थापक आचाय वल्लभाचाय जी के वशज ही किशनगढ राजवश क राज गुरु हैं। कहते हैं, आचाय वल्लभाचाय के सात पुत्र थे जा सात लाल जी के नाम स प्रसिद्ध हैं। इन्ही सातो लाल जी की पथक पथक् गद्दियाँ स्थापित की गई थीं। वल्लभ कुल सम्प्रदाय के अनुयायी इन सातों गद्दियो मे से चाहे जिस गद्दी के शिष्य हो, किन्तु सम्मान के विचार से वे सातो धार्मिक गुरुओ को एक समान ही पूज्य समझते हैं।

सयोगवश महाराजा सुमेर सिंह के समय म इन गद्दियो के कई गुरुओ का समय समय पर किशनगढ पधारना हुआ। महाराजा साहब ने बडी श्रद्धा एव भक्ति के साथ इन गुरुओ का स्वागत किया एव गुरु शिष्य की धार्मिक तथा भारतीय परम्परा के अनुसार गुरुओ का विधिवत् पूजन भी किया।

कृष्ण जन्माष्टमी और गन गौर आदि के उत्सव बड़े प्रेम से मनाते थे। उस समय धर्म के प्रति उनकी आस्था दृढ़ ही बनी थी। इतना ही नहीं



गुरु सेवा में निरत महाराजा समेर सिंह

भी अन्य धर्मों के प्रति भी उनके हृदय में सम्मान और आदर था। वह उनके उत्सवों में भी बड़े प्रेम से भाग लेते थे और उन्हीं धर्मावलम्बियों के समान ही उस धर्म में अपनी निष्ठा व्यक्त करने में कभी पीछे नहीं रहते थे।

# कला प्रेम

यद्यपि अपने पूर्वजों की भांति महाराजा सुमेर सिंह ने न तो कविता लिखी न साहित्य सृजन किया और न कोई चित्र कलाकृति ही वह प्रस्तुत कर सके किंतु हर प्रकार की कला में उनकी विशेष रुचि थी और एक कलाकार की भांति ही वह इन कलाओं के मर्मज्ञ थे।

संगीतज्ञों का वह बड़ा आदर करते थे। यद्यपि वह हर प्रकार के संगीत के रसिक मर्मज्ञ एवं पोषक थे किंतु शास्त्रीय संगीत में उनकी विशेष रुचि थी। राग रागिनियों का उन्हें अगाध ज्ञान था और वह अच्छे अच्छे संगीतज्ञों की भी छोटी से छोटी त्रुटियाँ तत्काल बतला देते थे।

चित्रकला से भी उन्हें अनुपम प्रेम था। किशनगढ़ शैली (Kishangarh School of Painting) को वह बहुत अच्छी तरह से समझते थे। इस शैली के चित्रों का मूल्यांकन करने की भी उनमें अद्भुत क्षमता थी। वह जिस चित्र का जो मूल्य बतलाते थे बड़े बड़े चित्रकला मर्मज्ञों द्वारा भी लगभग उसका वही मूल्य आंका जाता था।

# खेलो मे रुचि

*कहा जाता है, कवि बनाये नही जाते उत्पन्न होते है।* केवल काव्य क्षेत्र मे ही नही उच्च श्रेणी की प्रतिभा चाहे जिस क्षेत्र म हो, व्यक्ति विशेष मे उसके जन्मजात सस्कारो के कारण ही होती है। यदि उस प्रतिभा के समुचित विकास का अवसर भी सुलभ हो जाये तो उसमे चार चाँद लग जाते हैं।

महाराजा सुमेर सिह एक जन्मजात खिलाडी थे। मेयो कालिज के समुचित वातावरण एव सभी प्रकार के साधनो की सुलभता से उनकी बहुँमुखी प्रतिभा ने विकास पाया।

यद्यपि टेनिस, क्रिकिट एव साइक्लि पोलो उनके प्रिय खेल थे फिर भी हाकी, फुटबाल बैडमिंटन स्काश, बिलयड और घोडो की पोलो आदि खेलो के भी वह बहुत अच्छे खिलाडी थे।

टेनिस के 'राजस्थान चम्पियनशिप टूर्नामेट' (Rajsathan Championship Tournament) मे भाग लेन के लिए जब वह अजमेर जाया करते थे तब वहाँ डबिल्स म उनके साथ मेयो कालिज के मिस्टर जी० आर० नायडू 'पाटनर' रहते थे। जयपुर म टेनिस के आल इडिया राजस्थान चैम्पियनशिप टूर्नामेट (All India Rajsathan Championship Tournament) म भी वह खेला करते थ और उनके साथ मिक्सड डबिल्स मे हर हाईनैस महारानी गायत्री देवी (जयपुर की वतमान राजमाता जी) 'पाटनर' रहा करती था।

शिकार खलने की प्रतिभा तो किशनगढ़ राजवश म सदा से ही चली आ रही थी किन्तु महाराणा मदन सिह क समय ■ इस वश म खेलो के प्रति

भी रुचि उत्पन्न हुई और किशनगढ को खेल जगत म भी अपना स्थान बनाने का सुअवसर प्राप्त हुआ। महाराजा मदन सिंह जी पोलो के भारत विख्यात खिलाडी थे। उनके समय मे किशनगढ की 'पोलो टीम' कलकत्ता व बम्बई आदि नगरो के टूर्नामेन्ट म भाग लेने जाया करती थी। मदन सिंह जी ने खेलो का प्रोत्साहन देने के लिए मदन क्लब' के नाम से किशनगढ मे एक क्लब की भी स्थापना की थी। उन्ही के समय म डक शूटिंग (बत्तखो का शिकार) व 'पिग स्टिकिंग (घोडे पर सवार होकर जगली सूअरो का शिकार) के लिए बडे जाने माने शिकारी दूर दूर से यहाँ आया करते थे।

महाराजा मदन सिंह के बाद महाराजा यज्ञ नारायण सिंह के समय मे भी खेल-कूद को पर्याप्त रूप मे प्रोत्साहन मिलता रहा। उन्होने राजपूताना फुटबाल टूर्नामेन्ट कराया जिसमे राजपूताने की कई प्रसिद्ध टीमो ने भाग लिया।

महाराजा सुमेर सिंह ने मेयो कालिज से अपनी शिक्षा समाप्त करके जब राज्याधिकार प्राप्त किया तब इस शुभ अवसर पर खशी के अन्य उत्सवो के अतिरिक्त खेलो का भी आयोजन किया गया था जिसमे प्रभात क्लब ने यहाँ की प्रसिद्ध टीम यूनियन क्लब को हरा दिया। इस मैच के बाद यह क्लब' ही समाप्त हो गया। फाइनल म महाराजा साहब की निजी टीम पैलेस टीम मे, जिसमे महाराजा साहब स्वय भी खेले थे प्रभात क्लब को हरा कर इस 'टूर्नामेन्ट म प्रथम स्थान प्राप्त किया था।

मदन क्लब मे केवल टेनिस ही हुआ करती थी। महाराजा सुमेर सिंह ने इस क्लब को नये सिरे मे स्थापित करके इसमे टेनिस के अतिरिक्त बैडमिंटन हाकी फुटबाल, क्रिकेट, स्क्वाश तथा बिलयर्ड आदि सभी खेलो को प्रोत्साहित करने के लिए इनके खेलने की इस क्लब मे व्यवस्था की। इसके बाद इस क्लब का नाम भी बदल कर सुमेर सिंह क्लब कर दिया गया।

वैसे तो आस पास के सभी स्थानो की टीमे बहुधा यहा पर हॉकी फुटबाल व क्रिकेट के मैच खेलने आया करती थी किन्तु सुमेर क्लब का एक वार्षिक उत्सव भी मनाया जाता था, जिसमे स्थानीय टीमो के अतिरिक्त बाहर से भी टीमे बुलाई जाती थी। इसी वार्षिक उत्सव म एक बार जयपुर की कमायूँ रेजीमेन्ट को हाकी मैच म महाराजा साहब की पलेस टीम ने ३ गोल से हराया था।

यद्यपि रियासत के भारतीय सघ मे विलीन हो जाने के बाद यहा खेलो का सरकारी सरक्षण समाप्त हो गया किन्तु महाराजा सुमेर सिंह का उत्साह

इस क्षेत्र में बराबर बना ही रहा। उन्होंने अपनी 'पनम टीम' को समाप्त करके उसे 'प्रभात क्लब' में विलीन कर लिया। इस नई टीम का नाम 'श्री सुमेर प्रभात क्लब' पड़ा। महाराजा सुमेर सिंह इसी टीम में खेला करते थे।



महाराजा समेर सिंह
सुमेर क्लब में हॉकी खेलते हुए

सन १९५० ईसवी से किशनगढ़ में राजस्थान सरकार ने 'पुलिस ट्रेनिंग स्कूल' की स्थापना की इससे यहाँ खेलों के क्षेत्र में और भी अधिक उत्साह बढ़ा तथा यहाँ का स्थानीय महत्व भी बढ़ गया।

महाराजा सुमेर सिंह जी ने सन १९६२ ईसवी में यहाँ साइकिल पोलो का खेल आरम्भ किया। उन्हीं दिनों महाराजकुमार जयपुर ने जयपुर में 'साइकिल पोलो टूर्नामेन्ट' कराये। जिसमें किशनगढ़ की टीम ने भी भाग लिया। इस टीम में महाराजा सुमेर सिंह स्वयं केप्टिन थे तथा उनके साथ ठाकुर कल्याण सिंह पाटन व अन्य दो खिलाड़ी और थे।

किशनगढ़ के स्थानीय टूर्नामेन्ट में भी महाराजा सुमेर सिंह का प्रमुख हाथ रहता था। इस टूर्नामेन्ट में वह स्वयं 'श्री सुमेर प्रभात क्लब' की टीम में खेला करते थे—

सन १९५५ के 'म्युनिसिपल दशहरा टूर्नामेंट' म 'श्री सुमेर प्रभात क्लब' की टीम फुटवाल म विजयी रही।

सन १९५६ म इसी टूर्नामेंट म यह टीम हाकी व फुटवाल दोनो मैचो में विजयी रही। इसी वर्ष दरबार इंटरमीडियट कालिज टूर्नामेंट में भी श्री सुमेर प्रभात क्लब की टीम ने ही हाकी और फुटवाल म विजय प्राप्त की।

सन् १९५७ म भी यह टीम उपरोक्त दोनो टूर्नामेंटो म हाकी और फुटबाल म विजयी रही।

सन १९५९ व १९६० म भी म्युनिसिपल दशहरा टूर्नामेंट मे हॉकी व फुटवाल म विजय श्री इसी टीम को प्राप्त हुई।

सन १९६१ म इस टूर्नामेंट म यह टीम हाकी म विजयी और फुटबाल म उप विजेता रही।

किशनगढ़ की स्थानीय राजनीति के कारण सन १९६२ म 'म्युनिसिपल दशहरा टूर्नामेंट' बन्द हो गये। इसी बीच महाराजा साहब के एक मित्र श्री चन्द्र दास पुरोहित का स्वर्गवास हो गया। महाराजा साहब ने उपरोक्त टूर्नामेंट के स्थान पर सन १९६२ म ही 'श्री सुमेर प्रभात क्लब' द्वारा आयोजित श्री चन्द्र दास पुरोहित की स्मृति मे टूर्नामेंट आरम्भ कर दिये जो दशहरे पर न होकर गणगौर उत्सव के समय होने लगे। इस वर्ष भी 'श्री सुमेर प्रभात क्लब' ही सदैव की भांति हाकी व फुटवाल म विजयी रहा।

सन १९६४ म भी इसी टीम ने इस टूर्नामेंट मे इन दोनो मैचो में विजय प्राप्त की। इस वर्ष 'श्री चन्द्र दास पुरोहित स्मृति' टूर्नामेंट म 'साइकिल पोलो' का भी मैच हुआ, जिसमे किशनगढ और अलवर की टीमो ने भाग लिया। इस मैच म महाराजा किशनगढ की टीम को अलवर के महाराज कुमार यशवन्त सिंह की टीम ने हरा दिया।

सन १९६५ म इसी टूर्नामेंट के अन्तगत किशनगढ व अलवर की टीम म फिर 'साइकिल पोलो' मैच हुआ। किशनगढ की टीम मे महाराजा सुमेर सिंह कुंवर जगजीत सिंह, कुंवर समर्थ सिंह व ठाकुर कल्याण सिंह पाटन खेले। इस बार किशन गढ की टीम ने महाराज कुमार यशवन्त सिंह जी की टीम को हरा दिया।

महाराजा सुमेर सिंह जी 'रजीत टॉफी' क्रिकेट टूर्नामेंट में राजस्थान टीम के कप्तान भी रहे थे।

# शिकार

भारतीय वर्ण व्यवस्था में ब्राह्मण अस्त्र व शस्त्र विद्या में पारंगत होते हुए भी इसका उपयोग बहुत कम ही करते थे, क्योंकि उनका कार्य इस विद्या की केवल शिक्षा देना ही होता था। किन्तु क्षत्रिय जाति पर शान्ति एवं व्यवस्था बनाये रख कर शत्रुओं से देश की रक्षा करने का उत्तरदायित्व होता था। इसलिये उन्हें अस्त्र व शस्त्र विद्या में अपनी दक्षता बनाये रखने के लिए शांति काल में आखेट खेलना अनिवार्य ही था। रथ हांकना, घुड़सवारी और लक्ष्य भेद का निरंतर अभ्यास आखेट के द्वारा ही होता रहता था। इसलिये शिकार करना क्षत्रिय जाति की परम्परा बन गई थी।

शिकार में भी समय परिवर्तन के साथ साथ तलवारों, भालों और धनुष बाणों का स्थान पिस्तौलों व बन्दूकों ने ले लिया। रथों और घोड़ों की जगह जीप-कारें प्रयोग में लाई जाने लगी।

किशनगढ़ राज वंश आखेट के क्षेत्र में भी अपना महत्वपूर्ण स्थान रखता रहा है। इस वंश में शेर को द्वन्द युद्ध द्वारा मार गिराने वाले महाराजा सावन्त सिंह सरीखे आखेटक हो चुके हैं। महाराजा सुमेर सिंह भी अपनी वंशानुगत परम्परा में एक माने हुये शिकारी थे। यद्यपि आप स्वयं शिकार कम करते थे और दूसरों से अधिक कराते थे फिर भी आपने अपने जीवन में २२ टाइगर (शेर) और २५ पैन्थर (तेंदुए) मारे थे। किन्तु किसी मादा जन्तु का शिकार आप कभी न तो स्वयं करते थे और न दूसरों को करने देते थे। आप की बन्दूक का निशाना अचूक लगता था जो शिकार को धराशाही बना कर उसके प्राण ही ले लेता था।

कहते हैं, एक बार आप शेर का शिकार करने गए। जंगल में हांक लगाने वाले व्यक्ति पर शेर ने अचानक ही आक्रमण कर दिया। दोनों में गुत्थम गुत्था

हो गई। आपने उसी समय निशाना साध कर बन्दूक दाग दी। गोली शेर के लगी और वह छटपटा कर गिर पड़ा। उसके प्राण निकल गये। हाँका को तुरन्त ही जीप में डाल कर अस्पताल पहुँचाया गया।



मकसूदनगढ़ (मध्य प्रदेश) के बीहड़ जंगलों में महाराजा सुमेर सिंह द्वारा शेर का शिकार।

यह कहा जाता है कि जीप चालन (ड्राइविंग) में महाराजा सुमेर सिंह अपना सानी नहीं रखते थे। भागती जीप में से जब आप शिकार को लक्ष्य करके बन्दूक चलाते थे तो 'स्टेयरिंग व्हील' पर से दोनों हाथ हटा लेते थे,

जीप दौडती रहती थी और वह दोनों हाथों में बन्दूक साध कर गोली दाग देते थे। निशाना अचूक लगता था और शिकार बच कर निकल नहीं पाता था।



उमरी (मध्य प्रदेश) में शेर और महाराजा सुमेर सिंह।

लक्ष्य भेद में भी महाराजा सुमेर सिंह जी भारत के जाने माने निशाना लगाने वालों में से, एक थे। सन ६६ इसवी में दिल्ली में नेशनल स्कीट चैम्पियनशिप (National Skeet championship) मे बीकानेर की थण्डर बोल्ट राइफल क्लब टीम (Thunder bolts Rifle Club Team) ने भाग लिया था जिसमें बीकानेर के हिज हाईनेस महाराजा डाक्टर कर्णी सिंह कप्तिन थे और उनके साथ ठाकुर कानू सिंह व महाराजा सुमेर सिंह जी थे। इस टीम ने

३०० म से २४२ का स्कोर वना कर इस प्रतियोगिता म प्रथम स्थान प्राप्त किया था।



महाराजा सुमेर सिंह और तेन्दुए का शिकार।

सन १९६६ के 'ओलम्पिक खेलो म शूटिंग (Shooting) के लिए भारत का प्रतिनिधित्व करने महाराजा बीकानेर गये थे किन्तु महाराजा सुमेर सिंह का शूटिंग म इतनी अधिक रुचि थी कि आप इसे देखने के लिए ओलम्पिक तक म पहुँचे।

महाराजा सुमेर सिंह ने अपने जीवन में केवल शेर और तेन्दुआ का शिकार ही नहीं किया था, अपितु कई विशाल काय जंगली भैंसे भी मारे थे। किशनगढ़ राज्य के इतिहास में महाराजा सुमेर सिंह जी सदा ही एक कुशल निशानेबाज के रूप में याद किए जायेंगे।



जंगली भैंसे का शिकार करते हुए महाराजा सुमेर सि ।

# राजनतिक जीवन

महाराजा सुमेर सिंह राजनीति से सदैव दूर रहा करते थे। सन १९६७ के आम चुनावो मे किशनगढ और उसके आस-पास की जनता ने आप से विधान सभा का चुनाव लड़ने का आग्रह किया तो आपने इसमें अपनी अरुचि दिखलाते हुए स्पष्ट मना कर दिया। फिर भी जनता के कुछ प्रमुख व्यक्तियो ने हर हाईनस राजमाता साहिबा के द्वारा, चुनाव लड़ने के लिये आप के ऊपर दबाव डलवाने का प्रयास किया, किंतु आप फिर भी इसके लिय सहमत नही हुए।

एक बार इसी विषय को लेकर मदन गज मे जनता की आम सभा हुई कि महाराजा किशनगढ को किस प्रकार चुनाव मे खड़ा किया जाये ? इस सभा म हजारो व्यक्ति भाग ले रहे थे।

सयोगवश उसी समय जयपुर की हर हाईनेस महारानी गायत्री देवी ब्यावर से जयपुर जा रही थी उनके साथ प्रोफेसर रगा भी थे उन्होने माग मे किशनगढ की यह सभा देखी और इसके विषय मे मालूम किया। महारानी गायत्री देवी ने वही सभा म भाषण दिया और कहा, यदि यहा की जनता अपने महाराजा के प्रति इतना स्नेह रखती है और उन्ह राजनीति म लाने के लिए इतनी उतावली है तो जनता को पूण अधिकार है कि वह महाराजा को बल पूवक राजनतिक क्षेत्र म ले आये।

इस भाषण का जनता पर इतना प्रभाव पड़ा कि कई हजार व्यक्ति एकत्रित होकर फूल महल गये और महाराजा व राजमाता से अनुरोध किया कि महाराजा साहब विधान-सभा का चुनाव लडें। यदि महाराजा साहब हमारी भावनाओ को ठुकरायेंगे तो हम लोग यही फूल महल मे भूख हडताल आरम्भ कर देंगे और तब तक नही हटेंगे जब तक महाराजा साहब चुनाव लडने के लिय अपनी सहमति प्रदान नही करेंगे।

सन १९६७ के आम चुनाव में विजयी होने पर जुलूस में महाराजा सुमेर सिंह ।



चुनाव मे महाराजा सुमेर सिंह की विजय पर जनता का उत्साह ।

जनता के ऐसे स्नेह भरे अनुरोध और राजमाता की आज्ञा के सम्मुख महाराजा सुमेर सिंह को झुकना ही पड़ा।

आप एक निर्दलीय प्रत्याशी के रूप में राजस्थान विधान सभा के लिए चुनाव क्षेत्र से उतर आये। इस चुनाव में आप बहुत बड़े बहुमत से विजयी हुए तथा आपके विरोधी कांग्रेस प्रत्याशी की जमानत भी जब्त हो गई।

कुछ समय बाद आप स्वतन्त्र पार्टी के विधान सभाई दल में सम्मिलित हो गये और स्वतन्त्र पार्टी के सदस्य बन गये।

जन सम्पर्क बनाये रखने के लिए आप बहुधा अपने विधान सभाई क्षेत्र का दौरा किया करते थे। ग्रामीण लोगों की समस्याओं को सुनने तथा उनकी आवश्यकताओं को सम्बन्धित विभागों में पहुँचा कर अधिकारियों से समुचित कार्य कराने का प्रयास भी करते थे। विपक्षी दल में होने के कारण इन कार्यों को सम्पन्न कराने में आपको बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था फिर भी आप इसे अपना कर्त्तव्य समझ कर अपने प्रयासों से पीछे नहीं हटते थे।

छोटे से छोटा व्यक्ति भी आप से कभी भी मिल सकता था। इनका निवास स्थान मैंसेला कोठी शहर से कई मील दूर है। वहाँ आने जाने में मिलने वाले को कोई कष्ट न हो इसलिए आप को जैसे ही फोन पर सूचना मिलती कि अमुक व्यक्ति मिलना चाहता है आप उसे फूल महल (अपने शहर वाले महल) पहुँचने को कह कर स्वयं भी कार से वहाँ पहुँच जाते थे। इस प्रकार आपने राजनैतिक क्षेत्र में अपना एक विशिष्ट स्थान बना लिया था।

# सामाजिक सेवा

यद्यपि आपने प्रारम्भिक जीवन के केवल ६ वष ही ग्राम म व्यतीत हुए थे, किन्तु आपको इस छोटी सी अवस्था म ही ग्रामीणा की कठिनाइयो एव आर्थिक सकट को बहुत निकट से देखने का जो अवसर मिला था उसकी छाप आपके कोमल हृदय पर सदैव ताजा बनी रही। यही कारण था, कि आपने महाराजा होकर भी गरीबो को लाभ पहुँचाने और उन्ह सहायता करने के किसी भी अवसर से अपने आप को विमुख नही किया। आर्थिक सकट से ग्रस्त जो भी व्यक्ति आपके पास आता आप बिना किसी भेदभाव के यथासम्भव उसकी सहायता करते थे।

भारत विभाजन के समय पाकिस्तान मे हिन्दुओ पर किये गये अत्याचारों से बचने के लिए लाखो हिन्दू भाग कर शरणार्थी के रूप मे भारत आये। उन्होंने पाकिस्तानी अत्याचारो की करुण कहानियाँ सुनाइ, जिसकी प्रतिक्रिया के फलस्वरूप भारत मे भी कई स्थानो पर हिन्दू-मुस्लिम झगडे हुए। उस समय महाराजा सुमेर सिंह ने हिन्दुओ को समझाया मुसलमानो को धय बँधाया। आप बन्दूक लेकर मुसलमानी मोहल्लो म रात रात भर फिरते थे और कहते थे तुम निश्चिन्त रहो जब तक मैं जीवित हूँ तुम्हारा कोई बाल बाँका नही कर सकता।' इसके फलस्वरूप न तो यहाँ के मुसलमान भाग कर पाकिस्तान गय और न यहाँ कोई साम्प्रदायिक दगा ही हुआ।

सन १९६९ म अति वष्टि के कारण आपके चुनाव क्षेत्र मे बडी हानि हुई। कई गाँव इससे बुरी तरह प्रभावित हुए और सहस्रो व्यक्तियो को बे घर बार होना पडा। उन्ह भूखो मरने तक की नौबत आ गई। आप ने उन गाँवो का दौरा कर स्वय स्थिति का निरीक्षण किया और क्षतिग्रस्त लोगो की सहायता राज्य सरकार से करवाई तथा अपने निजी कोप से भी गरीबो म अन्न व आवश्यक वस्तुएँ बँटवाई। अपने पसे से अनाज खरीद कर ग्राम

पचायतों में भिजवाया जिसे २५% कम मूल्य पर जनता में बिकवाया गया। उस २५% मूल्य को आपने स्वयं वहन किया। इस प्रकार लगभग एक लाख रुपये आपने राहत कार्यों में अपनी जेब से व्यय किया।

कहते हैं अजमेर का कलक्टर आपके साथ अतिग्रस्त क्षेत्रों में जाने में शर्माता था। उसने राजस्थान सरकार को लिखा, 'मैं राजा साहब किशनगढ़ के साथ बाढ़ ग्रस्त क्षेत्रों में तभी जा सकता हूँ जब मुझे वहाँ के लिए और अधिक आर्थिक सहायता दी जाय क्योंकि महाराजा साहब अपने रुपये से जितनी सहायता वहाँ के लोगों की करते हैं, उसकी तुलना में मेरे पास सरकारी रुपया बहुत कम है।'

# जनता पर प्रभाव

स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूव और स्वतन्त्रता के प्रभातकाल मे कॉग्रेस ने भारतीय जनता को जो आश्वासन दिये थे उसम से ५०% भी वह पिछले २३ वर्षों मे पूरा नही कर पाई। इसके विपरीत जनता महँगाई भ्रष्टाचार एव असामाजिक तत्वो से दुखित हो रही है। देश मे नेताओ की एक बाढ सी आ गई है। भाई भतीजावाद इतना पनप रहा है कि सामान्य व्यक्ति की बात को तो कोई पूछने वाला ही नही है। इसलिए भूतपूव रियासतो की अधिकाश जनता अपने राजाओ को याद करती है और उनके प्रति श्रद्धा रखती है। फिर महाराजा सुमेर सिंह ने तो स्वय को जनसाधारण म इतना घुला मिला लिया था वह अपने आपको उनसे अलग नहा समझत थे। इसके अतिरिक्त उनके सामाजिक एव राजनैतिक जीवन का जो चित्र जनता के सम्मुख आया वह कॉग्रेसी नेताओं के बिल्कुल विपरीत था। जनता ने अनुभव किया कि महाराजा सुमेर सिंह ने जनता के जिस हित के लिए अपनी रियासत का भारत सघ म विलीनीकरण कराया था उस उद्देश्य की पूर्ति न होने देख अब वतमान समय म वे अधिक स अधिक जो कर सकते थे उसको पूरा करन म कोई कमी नहीं कर रहे। यही कारण था कि वह जनता म अत्यधिक प्रिय हो चुके थे।

लोकतन्त्र एव समाजवाद के नारो म राजा महाराजाओ का जो चित्र खींचा जा रहा है उनके विरुद्ध जो प्रचार कराया जा रहा है उसका किशनगढ की जनता पर कोई प्रभाव नहा पडा। उसे अपने प्रिय महाराजा म बडी अगाध श्रद्धा थी।

# अन्तिम लीला

१६ फरवरी १९७१ का दिन था। उस दिन रात को महाराजा तथा महारानी को किशनगढ म ही किसी के यहाँ विवाहोत्सव मे जाना था। शाम को लगभग साढे छ बजे अपने निवासस्थान मझेला कोठी म महारानी से विवाहोत्सव मे जाने के लिए तयार रहने को कह कर महाराजा स्वय रूपनगढ के चुनाव कायकर्ताओं से बात करने के लिये फूल महल आ गये। इसी बीच लगभग सवा सात बजे टेलीफोन की घटी बजी। महाराजा ने फोन पर किसी स बात की और महल के एक कमचारी को अपने साथ ले कर कार से चल दिये।

लगभग ९ बजे पता चला कि जयपुर अजमेर राष्ट्रीय माग पर मदनगज से लगभग ४ मील दूर किसी नशस हत्यारे ने गोली मार कर महाराजा की हत्या कर दी है। महाराजा अपनी कार म साढे आठ बजे स्टेयरिंग के पास मृत पाए गए।

इस आकस्मिक दुखद समाचार से राजभवन एव सारा किशनगढ मदनगज शोक म डूब गया। लोगो के झुण्ड के झुण्ड घटना स्थल की ओर दौड पडे। जब यह समाचार आकाशवाणी पर प्रसारित हुआ तो देश भर म खलबली मच गई। राजस्थान की जनता हतप्रभ सी रह गई। किशनगढ के लोग तो आश्चय एव महान शोक मे डूबे हुए किकत्त यविमूढ से हो गये थे।

दूसरे दिन सवेरे स ही आसपास के ग्रामो की जनता किशनगढ की ओर उमड पडी। कई राज्यो के नरेश भागे हुए आये। पूण राजकीय एव किशनगढ राजवश की परम्परा के अनुसार महाराजा के पार्थिव शरीर की अत्येष्टि की गई। उस समय लगभग ५० हजार व्यक्तियों ने अश्रुपूरित नेत्रो से अपने प्रिय महाराजा को श्रद्धाजलि अर्पित की।

महाराजा सुमेर सिंह ने यद्यपि नेतागिरी का जामा नही पहिना था, फिर

भी महाराजा रहते हुए भी उनका नेता रूप ही अधिक मुखरित हुआ। वे वास्तव मे अपने क्षेत्र के सही रूप मे जनप्रिय नेता थे।

उनकी हत्या से आज बर्नार्ड शा के वे शब्द याद आते हैं, जो उन्होने महात्मा गांधी की हत्या हो जाने पर कहे थे —

It proves, how dangerous it is to be too good" अर्थात यह घटना (गांधी की हत्या) यह सिद्ध करती है कि अत्यधिक अच्छा होना भी कितना खतरनाक है।

महाराजा सुमेर सिंह के चरित्र एव उनकी जनप्रियता को देखते हुए किसी सीमा तक यह बात उनकी हत्या पर भी लागू की जाये तो अतिशयोक्ति नही होगी।

# महाराजा सुमेर सिंह का परिवार

हर हाईनेस महारानी श्रीमती गीता कुमारी का जन्म ७ जनवरी सन् १९३७ को पालिताना (गुजरात) राजमहल में हुआ था। आप पालिताना नरेश स्वर्गीय महाराजा श्री बहादुर सिंह की पुत्री हैं। आपका विवाह महाराजा सुमेर सिंह जी के साथ ३० जनवरी सन १९४८ को हुआ। आप विदुषी, धार्मिक, पति परायणा एवं सुयोग्य महिला हैं। आप महाराजा साहब के साथ



महारानी श्रीमती गीता कुमारी (वर्तमान राजमाता) की गोली से मारा गया पहला शेर राघोगढ़ (म० प्र०) में महाराजा सुमेर सिंह और महारानी गीता कुमारी।

सामाजिक कार्यों में भाग लेती थी एवं शिकार में भी साथ जाती थी। आप लक्ष्य भेद में पर्याप्त रूप से प्रवीण हैं। आपकी बन्दूक की गोली से लगभग १० १२ शेर अपने प्राण खो चुके हैं।

आपने अपने पति महाराजा सुमेर सिंह जी की नृशंस हत्या के समय एक वीर क्षत्राणी की भाँति जिस धैर्य एवं संयम से काम लिया वह बड़ा सराहनीय है।

किशनगढ़ की जनता के हृदय में आपके प्रति सदैव से ही सम्मान एवं असीम श्रद्धा रही है। अब महाराजा साहब का इस प्रकार स्वर्गवास हो जाने पर तो जनता के हृदय में आपके प्रति श्रद्धा के साथ साथ करुणा मिश्रित स्नेह की धारा भी प्रवाहित हो रही है। वह आपके दुःख से दुःखी है, किन्तु उसे विश्वास है कि आप महाराजा साहब के अधूरे छूटे कार्यों को साहस एवं निर्भयता से पूरा करेंगी।

किशनगढ़ की जनता राजमाता श्रीमती गायत्री देवी (जयपुर) राजमाता श्रीमती विजय राजे सिंधिया (ग्वालियर) और राजमाता श्रीमती कृष्णा कुमारी (जोधपुर) की भांति ही अपनी राजमाता श्रीमती गीता कुमारी को भी सामाजिक एवं राजनैतिक क्षेत्र में भाग लेते हुए देखने को लालायित है। आतुर है।

राजकुमारी श्री श्री कुंवर का जन्म १७ मई १९५० को हुआ था। आप व्यवहार कुशल एवं कुशाग्र बुद्धि हैं। महाराजा साहब के स्वर्गवास के बाद से आप जिस योग्यता से महल के भीतर एवं बाहर के कार्यों की देखभाल कर रही हैं वह आपकी अल्प अवस्था को देखते हुए प्रशंसनीय है।

राजकुमारी श्री नन्दिनी कुंवर का जन्म ३१ अक्तूबर सन १९५१ को हुआ था। आप अपनी बड़ी बहिन की आज्ञानुसार कार्य में तत्पर रहती है।

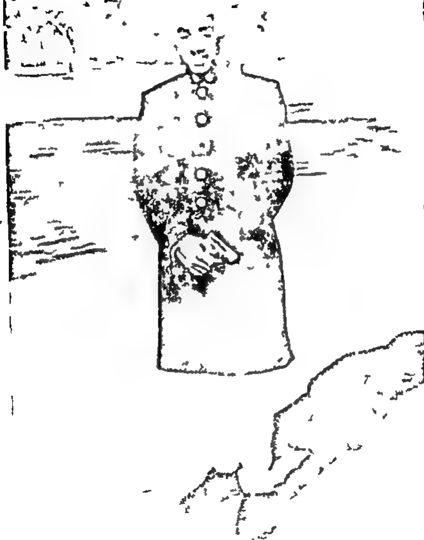
राजकुमार ब्रजराज सिंह (वर्तमान महाराजा) का जन्म २२ अगस्त सन् १९५३ का तथा राजकुमार श्री पृथ्वीराज सिंह का जन्म ?? फरवरी १९५५ को हुआ। आप दोनों ही इस समय विद्या अध्ययन में लगे हुए हैं।

हर हाईनस राजमाता साहिबा श्रीमती प्रताप कुंवर जी सरल स्वभाव की मृदु भाषिणी धर्म परायणा एवं पुराने विचारों की महिला हैं। आपने अपनी पुरानी परम्परानुसार पर्दा प्रथा का परित्याग नहीं किया है। यद्यपि महाराजा सुमेर सिंह आपके दत्तक पुत्र थे किन्तु आपके मातृत्व से वात्सल्य की पीयूषमयी धारा अविरल प्रवाहित रही जिसमें महाराजा साहब ने आपको जननी रूप

ही पाया। पुत्र को जननी मिली, और जननी को आज्ञाकारी पुत्र।

बहिन, हर हाईनेस श्रीमती गोम्घन कुँवर का जन्म २३ जुलाई सन १९३८ को हुआ था। आपका विवाह सन्त रियासत के नरेश हिज हाईनेस महाराणा श्री श्री कृष्ण कुमार सिंह के हुआ है। आप भी विदुषी, सरल हृदया, मदु भाषिणी, व्यवहार कुशल एव कुशाग्र बुद्धि महिला हैं।

इसके अतिरिक्त किशनगढ राजघराने के डूँगरपुर, रीवा, जयपुर, अलवर सिरमौर सिरोही आदि राजघराना से बहुत निकट के सम्बन्ध हैं। जोधपुर और बीकानेर तो राठौर क्षत्रिया के बडे घराने हैं ही किशनगढ राजवश भी उन्हीं की एक शाखा है।



(वर्तमान महाराजा)

हिज हाईनस उम्दये राजहाय बलन्द मकान महाराजाधिराज महाराजा श्री ब्रजराज सिंह जी बहादुर

# महाराजा ब्रजराज सिंह

महाराजा सुमेर सिंह के ज्येष्ठ पुत्र वर्तमान महाराजा ब्रज राज सिंह का जन्म सन १९५३ में २२ अगस्त को हुआ था। आप मेयो कालिज अजमेर से सीनियर कैम्ब्रिज पास कर चुके हैं तथा इस समय दिल्ली विश्वविद्यालय के अन्तर्गत सेन्ट स्टीफन्स कालिज में स्नातक (बी० ए०) कक्षा में शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं।

किशनगढ़ राजवंश की परम्परा के अनुसार महाराजा सुमेर सिंह के द्वादशे के दिन २८ फरवरी सन १९७१ को पगडी की रस्म पूरी होने के बाद आपको किशनगढ़ राज्य का उत्तराधिकारी नियुक्त किया गया।

## गद्दी

६ अप्रैल सन् १९७१ को भारत के राष्ट्रपति द्वारा मान्यता प्राप्त होने पर आपका पूरा नाम हिज हाईनेस उम्दये राजहाय बुलन्द मकान महाराजाधिराज महाराजा श्री ब्रजराज सिंह जी बहादुर हो गया। २१ वर्ष तक की आयु के लिए आपकी संरक्षिका हर हाइनेस राजमाता श्रीमती गीता कुमारी को राष्ट्रपति ने नियुक्त किया है।

आप भी अपने पिता की भांति ही सरल स्वभाव, धर्म परायण, उदार एवं व्यवहार कुशल व्यक्ति हैं।

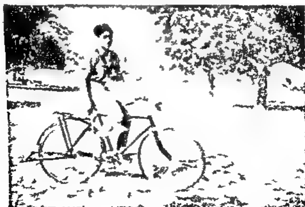
आप बहुधा अपने पिता के साथ शिकार में जाया करते थे। आप ने भी कई शेरों व तदुओं का शिकार किया है —

आप निशाना लगाने में अपने पिता की भांति ही सिद्धहस्त हैं। आपने सन १९६८ में अखिल भारतीय जूनियर वयस्क लक्ष्य वेध प्रतियोगिता (All India Junior Skeet Championship) में भाग लिया तथा प्रथम स्थान पा कर इसका स्वर्ण पदक प्राप्त किया है।



महाराजा ब्रजराज सिंह का पहला शिकार तेंदुआ (Panther) लम्बाई ७ फीट ५ इंच
(मण्डला में जनवरी सन १९६४ आयु १० वर्ष)

आपने सन् १९७० ईसवी की नेशनल शूटिंग चम्पियनशिप (National Shooting Championship) में जूनियर ट्रेप स्वर्ण पदक (Junior Trap Gold Medal) प्राप्त किया तथा इसी दिन जूनियर स्कीट रजत पदक (Junior Skeet Silver medal) भी आपको मिला।



मेयो कालिज में साइकिल पोलो खेलते हुये महाराजा ब्रजराज सिंह



सन १९६८—प्रान्ज शिविर— मयो कालिज में महाराजा ब्रजराज सिंह प्रिंसिपल श्री गिब्सन से कालिज का प्रथम इनाम— कारताम्ल कप लेते हुए।

खेलों में भी आपकी विशेष रुचि है। आप हाकी, फुटवाल, क्रिकेट, व साइकिल पोलो के अच्छे खिलाडी हैं। आप कई खेलों में किशनगढ टीम के कैप्टिन भी रह चुके हैं।

इसके अतिरिक्त शिक्षा प्राप्त करने में भी आप की गणना अच्छे विद्यार्थियों में की जाती है।

अभी तो अध विकसित पुष्प के समान आपकी अल्पावस्था ही है। विद्यार्थी जीवन चल रहा है। फिर भी विश्वास यही किया जाता है कि आप एक होनहार नव युवक सिद्ध होंगे। आपका भविष्य उज्ज्वल है। आप अपने पिता के पद चिह्नों पर चलते हुए सब प्रकार के व्यसनों से दूर रह कर देश व समाज की सेवा करेंगे तथा अपने देश की परम्पराओं का पालन करते हुए भारतीय संस्कृति के पोषक रहेंगे। किशनगढ राज्य की जनता को आप से बडी बडी आशायें हैं।

# राजवंश की परम्पराएँ (महल मे)

हर रियासत मे राजवंश के कुछ अपने रीति रिवाज एवं परम्पराएँ होती हैं। कहीं इन परम्पराओं में दूसरों की परम्पराओं से सामंजस्य मिलता है तो कहीं बहुत अन्तर भी पाया जाता है। किन्तु इनमें कुछ अन्तर होते हुए भी, भारतीय उप महाद्वीप में फैली हुई इन रियासतों की परम्पराएँ हमारी सांस्कृतिक एकता का प्रतीक हैं।

## किशनगढ़ राजमहल —

महलों का सभी प्रकार का प्रबन्ध करने के लिए एक अफसर नियुक्त होता था जो महल दरोगा कहलाता था। महल का छोटे से छोटा और बड़े से बड़ा सभी प्रबन्ध इस के द्वारा होता था किन्तु यह जनाने महल के भीतर नहीं जा सकता था। इसका दफ्तर महल के बाहर ही होता था। महल के भीतर से इसको नाजर के द्वारा आज्ञा प्राप्त होती थी और यह भी जो कुछ निवेदन करता था वह भी नाजर के द्वारा ही महलों के भीतर पहुँचा सकता था।

नाजर महल के दरोगा और महलों के भीतर रहने वाली दासियों के बीच संदेशों का आदान प्रदान करते रहते थे। दासियों का आदेश रानियों और महारानियों से प्राप्त होता था।

## दासी प्रथा —

अन्य रियासतों की भाँति यहाँ भी महलों में दासियाँ रहती थी। ये महारानी के स्नान से लेकर श्रृंगार आदि सभी दैनिक कार्यों मे उनकी सेवा करती थी तथा महलों के अन्य छोटे बड़े सभी काय भी ये ही करती थी। हर काय के लिए अलग अलग दासी की नियुक्ति होती थी।

यहाँ की दासी प्रथा में एक विशेष बात थी। यहाँ अधिकांश दासियाँ विवाहित होती थी। ये महल के बाहर काय करने वाले नौकरों की पत्नियाँ

हती थी। राजकुमारो के विवाह म भी, जो दासियाँ उनकी ससुराल से दहेज म मिलती थी उन सभी का यहाँ के नौकरो से विवाह कर दिया जाता था। ससुराल वाले जितनी दासिया देते थे। किशनगढ राजवंश के उतने ही नौकर खड़े कर दिय जाते थ, उन नौकरो म जो जिस दासी के योग्य समझा जाता उसके साथ उस दासी का विवाह वहीं कर दिया जाता था।

यदि कभी किशनगढ के महलो म कोई कुआरी लडकी दासी का काम करती थी तो उसको विवाह कर लेने की पूरी छूट थी और उसे महलो म ही दासी का काय करते रहन का भी कोई प्रतिब ध नहीं था।

**पासवान** —

अ य राज्यो की भाँति यहाँ भी पासवान प्रथा थी। राजा लोग रानिया व महारानियो क अतिरिक्त अन्य किसी जाति की स्त्री को अपनी पत्नी के रूप मे रखते थ वह स्त्री उस राजा की पासवान कहलाती थी।

## धावाई

राजकुमारो के पालन पोषण के लिए धाय रखी जाती थी। य धाय राजकुमार को अपना दूध भी पिलाती थी। इसलिय धाया के पुत्र (धाय+भाइ) धावाई कहलाते थे। धाय को दूध का कुँआ (कुछ जमीन) दिया जाता था और धावाइयो को जागीर दी जाती थी।

## जन्म से मृत्यु तक के सस्कार

ज म —जब राजकुमार का ज म होता था तो तोपें छोडी जाती थी, राजकुमारी के ज म पर नहीं। नामकरण सस्कार छठी आदि सभी रीति-रिवाज अ य लोगो की भाँति ही किए जाते है। पण्डित राशि फल बतात, ज म पत्री बनात व नामकरण सस्कार करात है।

**जन्म दिन** —

महाराजा का ज म दिन एक विशष दिन समझा जाता है। इस दिन मार्कण्डय जी का पूजन होता है ज्योतिषी राजा का अगला वषफल बतात हैं। बाजे भी बजते हैं और गाना बजाना भी होता है।

रियासत के विलीनीकरण से पहले ज म दिन के दिन महाराजा की जितन वष की आयु होती थी किले पर स उतनी ही तोपें छोडी जाती थी। उसके बाद नजर दरबार होता था, जिसमे राज्य भर के उमराव, जागीरदार, ठिकानेदार और राज्य के बड़ बड़े अफसर तथा जो भी खुशी से चाहता महाराजा को भेंट करने आता था।

करते हैं। खुशी का बाजा बजता है। १५ तोपो की सलामी दी जाती है और नय महाराजा अपनी परम्परागत उपाधि—"हिज हाईनैस उम्दये राजहाय बुलन्द मकान महाराजाधिराज महाराजा" से विभूषित किये जाते हैं।

स्वर्गवासी महाराजा के लिये साढे पाँच महीने तक पूर्ण शोक मनाया जाता है। महल में किसी प्रकार की खुशी नहीं मनाई जाती। राजवंश के लोग मिठाई नहीं खाते। महारानी (स्वर्गीय महाराजा की विधवा) केवल आटे का नमकीन हलुवा खाकर रहती हैं। उनका अधिकाश समय पर्दे के भीतर एकान्त में व्यतीत होता है। हर किसी से वह मिलती नहीं हैं।

## सुधार व परिवर्तन

रियासतो के विलीनीकरण के बाद से दरबार ने अपने व्यक्तिगत नौकर बहुत कम कर दिये हैं तथा अपनी शानशौकत का भी लगभग समाप्त ही कर दिया है। इसलिये न तो अब महल दरोगा जैसा किसी व्यक्ति का पद है, न महलो में नाजर नौकर हैं, और न पहले की भाँति दासियाँ ही हैं। दासियो के स्थान पर कुछ स्त्रियाँ केवल नौकरानी के रूप में आवश्यक काम करती हैं।

चूँकि सस्कारो का सम्बन्ध धर्म से होता है इसलिए इन्हे तो, फिर चाहे खर्च कम करके ही सही, पूरा किया ही जाता है।

महाराजा मदन नारायण सिंह जी, महाराजाओ के द्वादशे के दिन कर्णेज प्रथा के बिल्कुल विरुद्ध थे, इसलिये उनकी इच्छा व आज्ञा से यह प्रथा किशनगढ रियासत के राज्य काल में ही समाप्त हो गई थी।

# प्रचलित कथाएँ

किशनगढ़ राजवंश की अपने आराध्यदेव भगवान कल्याण राय जी म सदव से ही असीम श्रद्धा एव विश्वास रहा है। इस श्रद्धा एव विश्वास के चमत्कार की कुछ कहानियाँ यहाँ प्रचलित है। आधुनिक सभ्यता के वातावरण म भले ही इन घटनाओं की सत्यता पर सन्देह किया जाये किन्तु यहाँ के राजवश व उससे सम्बन्धित घनिष्ट व्यक्तियो म इन्ह ऐतिहासिक तथ्यो के समान ही सत्य माना जाता रहा है —

महाराजा रूप सिंह

एक बार दिल्ली मे ईद के अवसर पर महाराजा रूप सिंह को बादशाह शाहजहाँ की सवारी म सम्मिलित होना था। बादशाह की सवारी निकलनी आरम्भ हो गई किन्तु रूप सिंह जी भगवान की पूजा मे इतने लवलीन हो गये कि उन्ह सवारी का कोई ध्यान ही रहा।

इधर रूप सिंह जी तो भगवान के चरणो म ध्यान लगाये बठे थे, उधर शाहजहाँ की सवारी उनकी हवेली के सामने होकर निकली। कहते हैं भगवान कल्याण राय जी ने स्वय रूप सिंह जी का भेष धारण कर दरवाजे पर बादशाह को भेंट निछावर की। शाहजहाँ ने प्रसन्न होकर उन्हे पन्ना की एक अँगूठी और एक हीरा दिया, तथा स्वय नमाज पढने चला गया।

ईद की नमाज के बाद बादशाह की सवारी फिर उसी माग से वापस लौटी। तब तक रूप सिंह जी पूजा से निवत हो चुके थ। अत उन्होने बादशाह की अगवानी करके भेंट निछावर की। जसे ही रूप सिंह जी भट देने के लिए आग बढे बादशाह ने मुस्करा कर कहा 'आज दो दो बार भेंट कसो ?

रूप सिंह जी एक दम सारी परिस्थिति समझ गय और बादशाह स बोल 'आज ईद के शुभ अवसर पर दो बार क्या दस बार भी भट की जाये तो थोडी है ?'

महाराजा रूप सिंह ने उसी दिन शाही दरबार से १५ दिन का अवकाश ग्रहण किया। दूसरे दिन वह जब भगवान की पूजा करने बैठे तो उन्होंने आराधना की "हे भगवान कल्याण राय तू ने किशनगढ़ का राजा होकर बादशाह का सिर क्या नवाया? इस तुच्छ कार्य के लिए तो मैं ही बहुत हूँ। तू ने तो इस राज्य की परम्परा ही समाप्त कर दी। अब आज से मैं न तो तुझे भोग लगाऊँगा और न स्वयं ही अन्न जल ग्रहण करूँगा।

कहा जाता है, रूप सिंह जी सात दिन तक लगातार वहीं भगवान के ध्यान में बैठे रहे। न तो भगवान को भोग लगाया और न स्वयं अन्न-जल ग्रहण किया। सातवें दिन भगवान् श्री नाथ जी ने स्वयं प्रगट होकर कहा, 'राजा! मेरी गलती हुई अब भविष्य में ऐसा कभी नहीं होगा। ये अपनी अँगूठी व हीरा ले और मुझे खाने को दे भूख लगी है।'

**महाराजा सावन्त सिंह (नागरी दास)**

जब नागरी दास जी किशनगढ़ का राज्य छोड़ कर वृन्दावन में रहने लगे तब एक साधु इनके पास आया और बोला, 'नागरिया! तू मुझे भगवान के दर्शन करा दे।'

नागरी दास जी ने उससे कहा, 'तुम शरद पूर्णिमा के दिन गिरराज जी की परिक्रमा करना तुम्हें भगवान के दर्शन हो जायेंगे।

उस साधु ने नागरी दास जी के कहे अनुसार शरद पूर्णिमा की रात्रि को गिरराज जी की परिक्रमा की तो उसे एक स्थान पर रास लीला की झलक दिखाई पड़ी वहाँ भगवान कृष्ण गा रहे थे —

राग केदार
हे री! मोर बाल विमल यश चाँदनी
गरजे सघन कन्दरा।

दूसरे दिन साधु ने नागरी दास जी को रात्रि में हुए दर्शनों के विषय में बतलाया, किन्तु वह वह गीत भूल गया जो उसने सुना था। नागरी दास जी ने उसे पूरा गीत सुना दिया और कहा, 'तुम ने भगवान् को यह गाते हुए सुना होगा।

साधु आश्चर्य चकित रह गया।

**महाराजा मदन सिंह —**

यह सन १९१४ के प्रथम विश्वयुद्ध में अंग्रेजों की ओर से विदेशों में युद्ध करने गये थे। कहते हैं एक मोर्चे पर जब ये युद्ध कर रहे थे तब शत्रु की ओर

से बड़ी विकट बमबारी हो रही थी। कई बम इनसे थोड़ी ही दूर आकर गिरे। इन्होंने भगवान् कल्याण राय जी का ध्यान किया। थोड़ी देर ही में इन्हें दिखलाई पड़ा—एक छोटा सा बालक मुकट काछनी धारण किये घोड़े पर सवार इनके मोर्चे के चारों ओर घूम कर चक्कर लगा रहा है।

मोर्चे से वापस आकर इन्होंने लन्दन में ही जवाहिरातों से जड़ा हुआ ५००००) रुपये के मूल्य का स्वर्ण मुकट बनवाया और उसे लेकर किशनगढ़ आये। यहाँ पर इन्होंने उसे मोर्चे वाले दिन की तारीख बतला कर मन्दिर के मुखिया से पूछा, 'उस दिन भगवान् का कौन सा शृंगार था?

मुखिया ने बतलाया, 'उस दिन मुकट काछनी का शृंगार था।'

महाराजा मदन सिंह ने यह मुकट श्रद्धापूर्वक भगवान को भेंट कर दिया, जो मन्दिर में आज भी मौजूद है।

# किशनगढ राज्य की सास्कृतिक देन

## साहित्य व कला

### साहित्य

किशनगढ राजवश ने हिन्दी साहित्य के क्षेत्र मे महान योगदान दिया है। इस वश म कई कृष्ण भक्त कवि हुए हैं, जिन्होने भक्ति काव्य की रसमयी धारा प्रवाहित कर इस क्षेत्र मे भी अपने वश का उज्जवल कीर्ति प्रदान की है, जिनम नागरी दास अत्यन्त प्रसिद्ध हुए हैं —

महाराजा रूप सिंह —(विक्रमी सम्वत् १६८५ से १७१५)

ये उच्च कोटि के कवि थे। इनके पद भक्ति रस से भरे तथा बडे सरस हैं। इनका ७५० दोहों का एक ग्रन्थ 'रूप सतसई' उपलब्ध हुआ है जो रीति काल का श्रेष्ठ ग्रन्थ है।

महाराजा मान सिंह (विक्रमी सम्वत् १७१५ से १७६३)

आप एक अच्छे साहित्यिक एव कवि थे। आपने 'सन्त सम्प्रदाय कल्पद्रुम" की रचना की जो पुष्टि मार्ग का एक प्रमाणिक ग्रन्थ समझा जाता है। प्रसिद्ध कवि वृन्द को आगरे से आप ही किशनगढ लाये थे।

महाराजा राजसिंह —(विक्रमी सम्वत १७६३ से १७०५)

इनके द्वारा रचित २४ ग्रन्थ उपलब्ध है इन ग्रन्थो मे इनकी वैष्णवता और कृष्ण भक्ति दृढ रूप मे प्रकट हुई है। सभी ग्रन्थ वैष्णव मन्दिरो म मनाये जाने वाले विविध उत्सवो से सम्बन्धित हैं। यह तथ्य ग्रन्थो के नाम से ही प्रकट हो जाता है—जन्मोत्सव के विष्णुपद, शरद पूनो के विष्णु पद, रास के विष्णु पद, होली के विष्णु पद फूलडोल के विष्णु पद रथ यात्रा विष्णु पद, राखी के विष्णु पद, चाँदनी के कवित्त अक्षय ततीया के कवित्त कीर्तन कवित्त पच कडी कवित्त, पवित्रा के कवित्त राधाष्टमी के पद, वसन्त के पद दीप मालिका के पद धमार के पद रामनवमी के पद वर्षा के पद, दानलीला के पद, खडिता के पद ग्रीष्म ऋतु के पद रुक्मिणी हरण, हिंडोरा

के पद, नृसिंह चतुर्दशी के पद। इन ग्रंथों में ब्रजभाषा की मधुरता तथा पदों की संगीतात्मकता अवलोकनीय है।

*महाराजा सावन्त सिंह (उपनाम नागरी दास)* —

(विक्रमी सम्वत १८०५ से १८२३)

आपका साहित्य हिन्दी का श्रेष्ठतम रीति काव्य कहा जा सकता है। आपने छोटे बड़े कुल मिला कर ७६५ ग्रंथों की रचना की है। आप के ७८ ग्रन्थों का संकलन 'नागर समुच्चय' के नाम से सम्वत १९५५ के लगभग प्रकाशित हुआ था। प्रसिद्ध ग्रंथ इस प्रकार हैं—रसिक लावनी, विहार चन्द्रिका, निकुंज विलास, कवि वैराग्य वल्लरी, भक्ति सार, पारायण विधि प्रकाश, ब्रज सार, गोपी प्रेम प्रकाश, ब्रज बैकुण्ठ तुला, भक्ति मग दीपिका, पद प्रबोध *माला, रामचरित माला, जुगल भक्ति विनोद, फाग विहार, बाल विनोद,* बन विनोद, तीर्थानन्द, सुजानानन्द, बन जन प्रसंग, छूटक पद तथा इश्क चमन। नागरी दास रीति काव्य के उत्कृष्ट कवि, कुशल चित्रकार और संगीतज्ञ थे। आप रीति कालीन परम्परा के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं। शृंगार और प्रेम इनके काव्य का प्राण है। ब्रजभाषा का माधुर्य, उसकी अनुप्रासिकता तथा गीतात्मकता देखते ही बनती है। इन्होंने शृंगार के क्षेत्र में प्रेम तत्व के विविध विधानों को अत्यन्त सरसता और मार्मिकता के साथ व्यक्त किया है। अलंकार वैभव, नायिका भेद चित्रण, नख शिख वर्णन सभी अनूठे बन पड़े हैं। दोहा, चौपाई, कवित्त छन्दों की प्रधानता है। पद, विविध राग रागिनियों में बंधे हुए हैं। कवि पर संस्कृत और प्राकृत भाषा के प्रेम काव्यों की गहरी छाप है। निम्न उद्धरण से इन तथ्यों की पुष्टि होती है —

*फूलनि को गई उत सखी मिली जहाँ तहाँ*
*इत की रंगीले कछु औरे हार मे करे।*
रसिक रसाल बाल दयौ चाहे उर माल,
*अब मन्द लाल हँसि आगे हाथ ले करे।*
उरमी चित में कम्प स्वेद सुर रंग भये,
नागरिया नागर अनंग रंग सौं भरे।
राधे जू दयो है हार मोतिन को मोहन कूँ
मोहन जू हार होय राधे के गरे परे।

*भक्ति के क्षेत्र में* नागरी दास ने दास्य—सख्य—आत्मनिवेदनादि भावों का सुन्दर निरूपण किया है। वैष्णवी पूजा, उत्सव, झाँकियों का वर्णन इनके द्वारा बड़ा सरस बन पड़ा है।

किशनगढ के ऐतिहासिक प्रमाण इन्हे पुष्टि मार्गीय बतलाते हैं किन्तु इनके कई ग्रन्थो में राधिका जी की प्रधान रूप से आराधना की गई है —

कहा है परायो सब दौसत सो राधे ही को,
बिन ही बिचारे झूठे वचन उचारे जू।
राधे ही की भूमि यहै राधे ही के खग मग
राधे ही को नाम रहे सांझ औ सकारे जू ॥
राधे ही के सरवर, तरवर है राधे जू के,
राधे के ही फूल फल नागर निहारे जू।
राधे की दुहाई फिरे राधे ही को वृन्दावन
तुम कौन लला बीच हटकनि हारे जू ॥

इस प्रकार की कविताएँ एव इनके उपनाम नागरी दास के आधार पर कुछ लोग इनके काव्य को निम्बार्क सम्प्रदाय का मानते है। वास्तव मे यह शोध का विषय है।

आप फारसी के भी विद्वान थे। आपका फारसी का काव्य भी अनूठा एव अद्वतीय है।

बनीठनी जी—

यह महाराजा सावन्त सिंह की पासवान थी तथा वृन्दावन मे उन्ही के साथ रही थी। इन्होंने भी कृष्ण भक्ति की अच्छी कवितायें लिखी हैं जो इनके द्वारा रचित ग्रन्थ 'नागर समुच्चय' म समाविष्ट हैं।

महारानी बांकावत जी —(विक्रमी सम्वत १७६०)

आप नागरी दास की विमाता थी। आप ने व्रज भाषा मे भागवत का पद्यानुवाद किया था जो 'व्रज दासी भागवत' नाम स प्रसिद्ध है।

सुन्दर कुँवरी (विक्रमी सम्वत् १७६३ से १८०५)

बांकावत जी की पुत्री थी। आपने नेह निधि, वृन्दावन गोपी महात्म्य रूपनगढ़ म लिखी। सकेत युगल, किशनगढ तथा रस पुञ्ज प्रेम सम्पुट सार सग्रह भाव प्रकाश राम रहस्य मित्र शिक्षा और युगल ध्यान, आदि ग्रन्थ इन्होंने अपनी सुसराल राघोगढ में लिखे थे।

इनके ग्रन्थों म राधा कृष्ण की युगल भक्ति प्रकट हुई है। ग्रन्थो की भाषा व्रज और राजस्थानी है, जो अत्यन्त मधुर है। बाल कृष्ण का वर्णन भी आप ने बडा सुन्दर किया है —

रज माँहि मगन मसो खेलत है।
सुभग चिकुट तन धूरि धूमरित डेलिक क्लिक सकेलत है॥
चौंकि चकित चहुँ औरनि चितवत छिपि माटी मुख मेलत है॥
सुदर कुँवरी घुटुरवनि दौरत कोटिन छवि पग पेलत है॥

**छत्र कुँवरी**

यह महाराजा सरदार सिंह जी की पुत्री थी। सम्वत १८३१ म इनका विवाह कोठडे के गोपाल सिंह खाची के साथ हुआ। इनका 'प्रेम विनाद' ग्रथ प्रसिद्ध है। प्रस्तुत पद मे चौसर का कितना अलकारिक वणन है —

बाढी चित चाह दोऊ खेलत उमाह भरे
दसा प्रेम पूर छिल अग दरसत है।
प्रम दाँव देत प्रिय झूँठे ही रुगट कहै
गहै पानि पानि रिस मिसै परसत है॥
चौपर की बाजी माँहि बाजी लागी गति मति की
चाल की चहुल मन मौज सरसत हैं।
नैनन मे नन मिले चरचा चरचा मे रीझन
रीझवार रीझ तहा रग बरसत हैं।

**महाराजा बिडद सिंह (विक्रमी सम्वत १८३८ स १८४५)**

आज उच्च कोटि के विद्वान थे। आपका सस्कृत पर पूण अधिकार था और आप अरबी व फारसी के भी पडित थे। गीत गोविन्द पर आपकी टीका एक उच्चकोटि का साहित्य है—बडे बडे पडित भी इसका अथ लगाने मे चकरा जात हैं।

इसके अतिरिक्त लगभग इन सभी राजाओ के समकालीन अनेको कवि हुए हैं जो राजाश्रय पाकर कविता कामिनी का शृगार करत रहे हैं। इनम दरबारी कवि वन्द सबसे अधिक प्रसिद्ध हैं।

इस राजवश मे जितने कवि हुए हैं वे अपने आप म इतने महान है कि सभी हिन्दी साहित्य मे अपना विशेष स्थान रखते है। इस प्रकार इन्होंने हिन्दी साहित्य को अपनी सेवाओ से अत्यधिक समद्ध किया है।

राजवश के अतिरिक्त भी इस राज्य मे अनेको कवि एव साहित्यकार हो चुके हैं जिन्होने अपनी लेखनी के द्वारा हिन्दी साहित्य सरिता म महान योगदान दिया है। उनम से कुछ प्रमुख ये हैं —

**निम्बार्काचाय परशुराम देव**—इनका रचनाकाल विक्रमी सम्वत् १५५० स १६०० तक है। यह राजस्थान मे वैष्णव धम का सवप्रथम प्रचार करने वाले आचाय थे। इनके द्वारा रचित परशुराम सागर मिला है जिसम ३० ग्रन्थ उपलब्ध हुए हैं। इनका काव्य कबीर–तुलसी—सूर—मीरा के काव्य की तुलना मे रखा जा सकता है। इन्होंने दोहा, साखी, चौपाई, कवित्त आदि छन्दो का सफलतापूवक प्रयोग किया है। इनकी भाषा मारवाडी और व्रज है। इनके काव्य मे राम कृष्ण की समन्वयात्मक साधना प्रकट हुई है। गय पदों म दास्य—सख्य—आत्म निवदनादि भक्ति भावो की सरस अभिव्यजना हुई है तथा बडे आकषक ढग से नीति की शिक्षा देकर खण्डन मडन द्वारा सतोजित ढग से सम्यक साधना तथा सरस सामाजिक जीवन की व्याख्या की गई है।

**कवि वृन्द**—यह महाराजा रूप सिंह के दरबारी कवि थे। इनके ग्रन्थ बडे प्रसिद्ध हैं। वृन्द सतसई नाम के अपने ग्रन्थ मे इन्होंने नीति का सुन्दर विवचन किया है।

**निम्बार्काचाय वृन्दावन देव**—विक्रमी सम्वत १७५४ से १७६७ तक यह सलेमाबाद निम्बार्काचाय पीठ के अखिल भारतीय जगत गुरु के निम्बार्का- चाय के पद पर आसीन हुए। यह महाराजा राज सिंह महाराजा सावन्त सिंह तथा महारानी बाँकावत जी और राजकुमारी सुन्दर कुँवरी को धार्मिक दीक्षा तथा साहित्यिक प्रेरणा देने वाले गुरु थे। इनका प्रसिद्ध ग्रन्थ गीता मत गगा है जिसमे कृष्ण चरित्र गाया गया है। इसम गोपी प्रेम की उत्कृष्ट अभिव्यक्ति की गई है।

चारण करणीलीन, टीकाकार हरिचरन दास, टीला स्वामी सुकवि वल्लभ हीरा लाल सनाढ्य विजय राम, राम कवि, कनीराम मुन्शी दौलत राम दयालाल और दामोदर इत्यादि कवि और साहित्यकार भी इसी भूमि पर हो चुके हैं।

**जन स्थानकों के कवि**—उपरिलिखित कवियो और साहित्यकारो क अतिरिक्त किशन गढ राज्य म जैन यति कवियो की रचनाएँ भी मिलती हैं जो किले के सरस्वती भडार चिन्तामणि जी के मन्दिर प्राचीन उपाश्रयो और महावीर भवन पुस्तकालय म सग्रहीत हैं जिसके विषय मे खोज की जा रही है।

## किशनगढ चित्र-कला
## (Kishangarh school of Painting)

किशन गढ की प्राचीन चित्रकारी अत्यन्त कलापूण रही है यही कारण है

आज यहाँ के प्राचीन चित्र विश्व भर मे मूल्यवान समझे जाते हैं। महाराजा किशनगढ श्री व्रज राज सिंह जी के पास आज भी ऐसे चित्र हैं जिनका मूल्य दो-तीन लाख रुपया प्रति चित्र आँका गया है।

इन चित्रो म कई विशेषताय हैं। कई तो ऐसे है जिन्हे साधारण दृष्टि स देखने पर तो कुछ नही दीखता पर खुर्दबीन की सहायता से देखने पर सना, नगर, उपवन आदि सभी कुछ चित्र मे स्पष्ट हो जाते है। इनम रग के स्थान पर सोने का प्रयोग किया गया है। उस सोने को आज भी शोधा जा सकता है। रगो म ऐसे मसाला तथा स्वनिर्मित कागजो का प्रयोग है जिनम कीडा लगता ही नही है। यहा का चित्रकार कागज और रग भी स्वय ही बनाता था।

चित्रो म अधिकाशत कृष्ण लीला चित्रित की गई हैं जिसम कृष्ण और राधा तथा उनकी राग वस त फाग आदि लीलाएँ पुष्टि मार्गीय परम्परा के अनुसार चित्रित हुई हैं।

महाराजा राज सिंह के समय म चित्र कला की प्रर्याप्त उन्नति हुई तथा महाराजा साव त सिंह उपनाम नागरी दास जी के काल म तो साहित्य व सगीत के साथ चित्रकला भी उन्नति के शिखर पर पहुँच गई थी। नागरी दास कालीन चित्रो म मुखमण्डल की शोभा विचित्र है। आँखा बरुनिया नाक, ठोडी दाढी व केश वि यास का सु दर अलकरण बन पडा है। इन चित्रा म सबसे बडी यही विशेपता है कि आप मुखमण्डल बरुनिया पलका मस्तक वेणी व दाढी मूँछ आदि के एक एक बाल अलग-अलग गिन सकते हैं। केश घन और गहरे होने पर भी इस तरह की कलम से चित्रित हैं कि अलग अलग और एक एक छितरे हुए भी दिखलाई पडते हैं। ऐसी केश स ज्जा भारत भर की प्राचीन चित्रकला म दुलभ है।

इन चित्रा म नायिका भेद अभिसार, दूती कम, सुरति अवस्था शृगार, स्नान केश वि यास दपण मुख दशन आदि का सु दर अकन मिलता है। राधा कृष्ण के अनक प्रेम प्रसग रास झूला हिंडोला, फाग दीप मालिका होली आदि क चित्रण दखन ही बनत ह। चित्रा म रास लीला चीरहरण दानलीला के अतिरिक्त कृष्ण की असुर सहारक लीलायें भी चित्रित हुई हैं जिनम नाग नाथन लीला गिरराज धारण पूतना वध आदि प्रसगों का बाहुल्य है।

पुरुपा क चित्रा म मुगल कालीन वशभूषा दाढी मूँछ तथा आभूषणा का प्रयाग हुआ है। पुरुपा क लिए सिर पर पगडी का विधान है। दूसरी आर स्त्री चित्रा म लहगा ओढनी कचुकि, कटिप्रदेश तक लम्बी वेणी का अकन हुआ

है। गहना म नथ, वलय, मुद्रिका, करधनी आदि का प्रयोग है। राजसी चित्रा म राजा घोडे पर दिखाये गए हैं तथा उनके दरबार की मुगल कालीन सज्जा दिखलाई गई है।

इन चित्रो म पीला, हरा, लाल तथा आसमानी रग बहुतायत से प्रयाग म लाया गया है। रगों म एसे पदार्थों का मल किया गया है जिनसे व आज भी चमकीली आभा लिये हुए हैं।

महाराजा सावन्त सिंह उपनाम नागरी दास

महाराजा सावन्त सिंह ने अपने बाल्यकाल म ही सस्कृत, फारसी और मारवाडी भाषा के अतिरिक्त सगीत तथा चित्रकला की भी पर्याप्त शिक्षा प्राप्त की थी। किशनगढ दरबार के चित्र सग्रहालय म चार ऐसे चित्र हैं जिन पर अकित हुए नाम से प्रतीत होता है कि ये चित्र सावन्त सिंह द्वारा उस समय बनाए गये हैं जब वह राजकुमार थे।

सावन्त सिंह ने अपने आराध्य देव राधा व कृष्ण को चित्रित करने के लिए एक विशेष प्रकार की नवीन शली को विकसित किया था।

सावन्त सिंह अपने प्रेम के प्रति इतने सच्चे थे कि वह जीवन की राह म चलते हुए प्रेम और भगवान कृष्ण की भक्ति द्वारा ही मोक्ष की कामना करत थ। किन्तु सावन्त सिंह के जीवन मे एक दूसरा प्रेम और था। उनका यह प्रेम एक सुन्दरी के प्रति था। वह सुन्दरी भी उनके प्रति अपनी असीम श्रद्धा एव प्रेम क अटूट बन्धनो से बँधी हुई थी।

यद्यपि उन दोनों की आयु में १८ वष का अन्तर था किन्तु उनके मस्तिष्क और हृदय पूण रूप से एक थे। व दोनो राधा और कृष्ण के अनन्य भक्त थ और दोना ही उच्च कोटि के कवि थे।

किशनगढ चित्रकला में नारी मुखाकृति किसी पुरानी शैली का विकसित रूप नहीं है। किशनगढ शैली का विकास व्रज भाषा कवियो द्वारा वर्णित राधा के रूप को मान कर हुआ है। सच तो यह है, किशनगढ शली एक आदश से प्रोत्साहित हुई है, जो एक जीवित नमूने पर आधारित थी तथा जिसे बडी चतुराई के साथ पहले से प्रचलित लौकिक नारी शली म परिवर्तित कर दिया गया है।

सावन्त सिंह स्वय ही इस नारी मुखाकृति शैली के जन्मदाता थे। यह शली एक नवीन पद्धति है जो समस्त राजस्थानी चित्रकला क्षेत्र मे अपनी एक

विशेष मोहकता रखती है। यह नवीन प्रवतन केवल राधा के ही रूप म नही बल्कि कृष्ण के रूप मे भी हुआ है।

सावत सिंह उपनाम नागरी दास जी ने अपनी प्रेमिका के सम्बध म एक लम्बी पतली-दुबली नारी के अनुपम सौदय का वणन किया है—जिसका मुख लम्बा और विकसित है। धनुपाकार भौहे हैं। लम्बे नेत्र और ऊँची नाक है। यही मुखाकृति और छवि किशनगढ शली मे नारी-मुख को चित्रित करने मे प्रोत्साहित हुई। जिसे चित्रकारो ने वैष्णव सम्प्रदाय की सनातन विचार धारा के अनुरूप अपने कला कौशल से कृष्ण के प्रति प्रेम करने वाली गोपिका राधा के रूप मे चित्रित किया।

यह प्रेमिका सावत सिंह जी की पासवान बनीठनी थी। क्योकि बनीठनी पर्दा नही करती थी, इसलिए वह इस सुदर शली का नमूना बनी। (इसी पुस्तक मे देखिये रगीन चित्र 'श्री राधा'। यह चित्र बनी ठनी की ही मुखाकृति की प्रति छवि है)। इस चित्र के चित्रकार हैं उस काल के अमर चित्रकार श्री निहाल सिंह।

सावन्त सिंह एक सुदर, वीर एव सुसभ्य राजपूत सरदार थे जो भगवान की प्राप्ति का माग शाही आडम्बर और वभव म भी देखते थे। बनीठनी गायिका और अनुपम सुदरी थी जो बचपन से ही सदव अपने साज श्रृगार मे सजी धजी रहती थी, इसीलिए उसका नाम बनीठनी पड गया था।

उन दोनो का आपस मे ऐसा उत्कृष्ट प्रेम था कि इस प्रेम के लक्ष्य म सावत सिंह उपनाम नागरी दास जी कृष्ण रूप म और बनीठनी राधा रूप म परिवर्तित हो गई थी। यह एक ऐसा परिवतन था कि जिसम कोई धन्धा लेशमात्र को भी नही था।

किशन गढ के चित्रकारों के लिए नागरी दास जी की कविता को आधार मान कर यदि बनीठनी राधा के चित्र का नमूना बनीतो बनीठनी की कविता के आधार पर नागरी दास जी कृष्ण के चित्र का नमूना (model) बने तो इसम आश्चय ही क्या है?

(इसी पुस्तक म देखिए राधा कृष्ण का रगीन चित्र—कृष्ण रूप म नागरी दास जी और राधा रूप मे बनीठनी)

वल्लभ सम्प्रदाय की विचारधारा के अनुसार मनुष्य की आत्म सदव पार ब्रह्म मे लीन होने के लिए भटका करती है। पार ब्रह्म अपनी सच्ची भक्ति एव प्रेम के वशीभूत होकर भक्त के पास स्वय ही पहुँच जाता है। गोपिका राधा जो कृष्ण क प्रेम म इतनी लीन है कि उसे सिवाय कृष्ण के ससार म और किसी का कोई ध्यान ही नही है। उस राधा के पास रहने की कृष्ण की-



**श्री राधा जी**

(विश्व विख्यात मोनालिसा के समकक्ष समझी जाने वाली कलाकृति)

संकलन महाराजा ब्रजराज सिंह किशनगढ़

इच्छा का अर्थ भी यही है कि पार-ब्रह्म कृष्ण अपनी आराधिका एवं सच्ची प्रेमिका के पास रहने को आतुर है। वल्लभ सम्प्रदाय में कृष्ण के प्रति राधा का ऐसा आत्म समर्पण ही मोक्ष पाने का सही मार्ग है। कृष्ण रूप में लीन हो जाने वाले सावंत सिंह उपनाम नागरी दास जी का राधा रूप मे लीन हो जाने वाली बनीठनी के प्रति प्रेम का भी सार यही है। जो वल्लभाचार्य सम्प्रदाय के अनुयायी चित्रकारों को प्रेरणा का स्रोत बना तथा किशनगढ़ शैली में, विश्व विख्यात 'मोनालिसा' जैसे चित्र के समकक्ष समझी जाने वाली 'श्री राधा' जैसी उत्कृष्ट कलाकृति के निर्माण में सहायक हुआ। किशनगढ़ चित्र कला शैली केवल किशनगढ़ राज्य की ही नहीं, चित्रकला के क्षेत्र में भारत का गौरव है।

## संगीत

किशनगढ़ महाराजा रूप सिंह के समय से ही संगीत का घर रहा है। चित्रकला की भाँति ही यहाँ की संगीतकला भी बड़ी प्रसिद्ध रही है तथा संगीतज्ञ यहाँ प्रश्रय पाते रहे हैं।

**महाराजा रूप सिंह**

आप शास्त्रीय संगीत के ज्ञाता, गायक एवं कवि भी थे। आपके बनाये पद बड़े मधुर एवं संगीतात्मक हैं।

**महाराजा सावंत सिंह उपनाम नागरी दास जी**

आप तो किशनगढ़ राजवंश में एक महान विभूति हुए हैं। आप कवि गायक एवं वादक सभी कुछ थे। मृदंग बजाने में भी आपकी बराबरी करने वाला कोई नहीं था। संगीतात्मक पदों में आपने विभिन्न प्रकार के राग-रागनियों को बाँध दिया है।

**महाराजा मदन सिंह**

आपकी शास्त्रीय संगीत में बहुत रुचि थी। आपने राग सोरठ में पद भी लिखे हैं। आपने किशनगढ़ के श्री देवी लाल को पंडित विष्णु दिगम्बर जी के पास लाहौर में रियासत के खर्चे से संगीत की शिक्षा प्राप्त करने के लिये भेजा था। श्री देवी लाल किशनगढ़ राज्य के महान संगीतज्ञ एवं महाराजा मदन सिंह के निजी गायकों में से एक थे। इन्होंने पंडित विष्णु दिगम्बर की पद्धति को अपनाया और किशनगढ़ में संगीत का विशेष रूप से प्रचार किया तथा अपने पुत्र श्री नत्थू लाल को संगीत की पूरी शिक्षा दी।

महाराजा यज्ञ नारायण सिंह

आप भी शास्त्रीय संगीत के ज्ञाता थे। स्वयं गाते भी थे। आपने राग सारंग एवं राग सोरठ में पदों की रचना भी की है।

महाराजा सुमेर सिंह

आप शास्त्रीय संगीत के ममज्ञ थे और उसकी रसानुभूति के आनन्द में डूब से जाते थे। आपको राग रागनियों का अगाध ज्ञान था। संगीतज्ञों के पोषक एवं बड़ी कदर करने वाले थे। आपने श्री दवीलाल के पुत्र श्री अमर लाल जिन्होंने अपने बड़े भाई श्री नत्थू सिंह से संगीत की शिक्षा पाई है को बहुत प्रोत्साहन दिया—आप ही के प्रोत्साहन से श्री अमर लाल ख्याल गायकों ध्रुपद गायकों एवं हवेली संगीत (मंदिरों में गाया जाने वाला संगीत) में, राजस्थान के ही नहीं भारत के प्रसिद्ध गायकों में हैं तथा बी० बी० सी० लन्दन ने राग गौरी नट भीम पलासी सारंग और ध्रुपद में इनके रिकार्ड बनाये हैं।

महाराजा सुमेर सिंह जी श्री अमर लाल व उनकी बहिन श्रीमती बजा बाई व श्रीमती ललिता बाई (रेडियो कलाकार जयपुर) से बहुधा संगीत सुना करते थे।

महाराजा सुमेर सिंह जी के कुछ प्रिय पद
(महाराजा रूप सिंह जी द्वारा रचित)

राग मल्हार (श्री नाथ जी के सम्मुख गाया जाता है)।

मैं कैसे आऊँ दामिनी माहि डराव।
जब जब गमन करूँ दिश
प्रीतम चमकत चक्र चलाव।
वे आतुर अति सजनी
रजनी यूँ बिरमाव।
गावत गगन पवन चल चंचल
अचल रहित तन पावन।
मुनि प्रिय वचन चतुर चलि आयो
भामिनी सो मन भावन।
रूप मिट प्रभु नगधर नागर
मिलि मल्हार सुर गावन।

संत नागरी दास (महाराजा सावंत सिंह) द्वारा रचित

राग मिश्र तिलक कामोद

जसुदा के फिरें भुवनान की वली।

श्री नागर राधे शृंगार कर।

वस बनों के भार आदटारन के,

बिग पायन के बिग लात धरे।

अति आनन ज्योतिमयी अगना

भयो रूप कया कही रूप काऊ धरे

जित जाय सँवारत बानी वधू तिय

दीपन की ज्योति फीकी परे।

## लोक-नृत्य

नृत्यकला द्वारा मानवीय मनोभावों व राग द्वेषों की अभिव्यक्ति हाव भावों के द्वारा प्रदर्शित की जाती है। शास्त्रीय नृत्य में इनका प्रदर्शन बड़ी सूक्ष्मता एवं सव्यस्थित रूपों में किया जाता है। शास्त्रीय नृत्यकार दर्शकों के हृदय में अपनी कला को उतार देने के लिये लालायित रहता है। किन्तु लोकनृत्य में नृत्यकार दर्शकों की ओर कम ध्यान देते हैं। वे स्वयं ही अपने मनोभावों में लीन हो जाते हैं। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं—शास्त्रीय नृत्य दर्शकों के लिए होते हैं और लोक नृत्य स्वान्तः सुखाय की भावना से ओत प्रोत।

शास्त्रीय नृत्य और लोक नृत्य में वही अन्तर है जो प्राकृतिक सौंदर्य और बनावटी सौंदर्य में होता है। किसी उद्यान में चटकती कलियां खिलते पुष्पों, फलों से आच्छादित तरुवरों, कल कल करते झरनों एवं सरोवरों को देखकर मन प्रफुल्लित हो जाता है किन्तु पहाड़ों पर झरते झरने बहती सरिता के कूलों पर फली हरियाली तथा जंगली तरुओं और पुष्पों को निरख कर जो मानसिक शांति प्राप्त होती है वह अकथनीय है। उद्यान में मानव अपनी रुचि के अनुसार प्राकृतिक दृश्यों को अपने बन्धनों में बांधने का प्रयास करता है किन्तु पहाड़ों पर प्रकृति उन्मुक्त रूप से अपना सौंदर्य बिखरती रहती है।

मानवीय प्रकृति के अनुसार हृदय में भावों का उठना और उनका प्रदर्शित करना स्वाभाविक ही है। किन्तु शास्त्रीय नृत्य मानव निर्मित उद्यान है तो लोक नृत्य प्राकृतिक दृश्य। जिस प्रकार उद्यान के दृश्यों की प्रेरणा प्राकृतिक

दृश्यों से प्राप्त होती है उसी प्रकार शास्त्रीय नृत्य की भाव भंगिमाएँ भी लोक नृत्यों से ही ग्रहण की जाती हैं।

यह सत्य है कि लोक-नृत्यों का प्रादुर्भाव नगरों की सभ्यता से दूर रहने वाले ग्रामीण समुदायों में होता है तथा साधारण वाद्य यन्त्रों की सहायता से लय-ताल के स्वभाव जन्य सहज ज्ञान के अनुसार इनका प्रदर्शन किया जाता है। किन्तु ये क्षेत्र विशेष की भौगोलिक, ऐतिहासिक, धार्मिक एवं परम्पराओं की वास्तविक झाँकी प्रस्तुत करते हैं। अपने परम्परानुगत रूप को लिए हुए पीढ़ी दर पीढ़ी से अपनी सांस्कृतिक थाती को अक्षुण्ण बनाये रहते हैं। इसीलिये किसी भी देश की संस्कृति के योगदान में लोक गीतों और लोक नृत्यों का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है।

इस विशाल भारतीय उप महाद्वीप में अपने-अपने क्षेत्रीय लोक नृत्यों की अपनी-अपनी विशेषताएँ हैं। राजस्थान में भी अपने अपने क्षेत्रों में भिन्न भिन्न

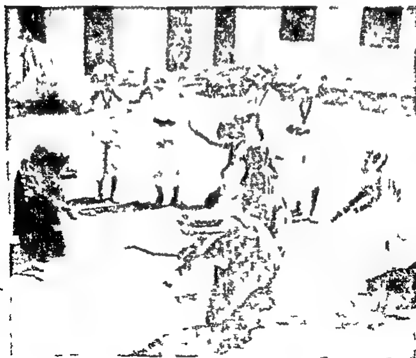


गुजरी नृत्य में निरत नृत्यांगना।

प्रकार के लोक-नृत्य प्रचलित है। किशनगढ राज्य के भी ग्रामीण अंचलो मे लोक-नृत्य सदैव से ही प्रचलित रहे हैं तथा समय समय पर इन्हे राजवंश की ओर से प्रोत्साहन भी मिलता रहा है। इसके लिए यहाँ पर महाराजा सुमेर सिंह जी ने किशनगढ पलस कला केन्द्र को एक सुव्यवस्थित रूप देकर इन नृत्यो के प्रचार मे महान् योगदान दिया है। महाराजा साहब इन लोक नृत्यो का आयोजन गणगौर के उत्सव पर विशेष रूप से कराया करते थे।

गणगौर के उत्सव पर होने वाले प्रमुख नृत्य —

१ दंग दस्त     २ गोरबन्द
३ म्हारी घूमर     ४ उड उड रे कागला
५ पनिहारी     ६ मेहंदी
७ बडती     ८ गूजरी
९ चरी नाच (यह नाच अग्नि नृत्य के नाम से भी प्रसिद्ध है)
१० एक बार हो पिया     ११ गोल नाच
१२ बाइ सारा बीरा     १३ रूमाल     १४ फागण



सन् १९६० मे गणतन्त्र दिवस पर राजधानी मे गूजरी नृत्य का दृश्य

# उत्सव व त्योहार

वैसे तो राजमहल म हिन्दुओ के सभी त्योहार मनाये जाते हैं किन्तु कुछ त्योहार विशेष उत्सवों के रूप म मनाये जाते हैं।

## श्रावण की हरियाली तीज

इस दिन फूल महल से लगा हुआ महिला बाग अपूर्व आनन्द की हिलोरें ले उठता है। इसकी हरियाली का कण कण नये उत्साह नई उमगो एव नई बहारो से झूम उठता है। जगह-जगह पेडा पर हिन्डोले पड जाते हैं। हिन्डोला पर झूलती और झुलाती हुइ नारियो के कठो से निकल श्रावणी गीता की मधुर ध्वनियाँ समस्त वातावरण को उल्लासमय बना देती हैं। महाराजा और महारानी एक ही हिन्डोल पर साथ साथ झूलते है।

इस उत्सव मे महल की सभी महिलाएँ, महारानी से लेकर दासी तक भाग लती हैं। नगर की भी सभी श्रेणियो की महिलाए भी सम्मिलित हो कर उत्सव की शोभा मे चार चाँद लगा देती हैं। पुरुष उस बाग म प्रवेश नहा कर सकते।

## जन्माष्टमी

भादो बदी अष्टमी को कृष्ण जन्म के रूप मे यह उत्सव नगर के सभी मन्दिरा श्री व्रजराज जी, श्री गोवर्द्धन नाथ जी श्री मदन मोहन लाल जी एव श्री सुख निधान जी आदि मे तो बडी धूम धाम से मनाया ही जाता है, किन्तु किले के भीतर श्री नाथ जी के मन्दिर मे इस उत्सव की शोभा कुछ अनोखी ही छटा प्रस्तुत करती है। भगवान श्री कृष्ण यहाँ के राजवश के आराध्य देव है। उनके जन्मोत्सव म भाग लेना राजपरिवार के सभी सदस्यो को अनिवार्य ही है।

बालक कन्हैया के जन्मोत्सव की खुशी में केशर मिश्रित दूध और दही एक दूसरे पर उछाला जाता है। मन्दिर के प्रांगण में दूध व दही की कीच हो जाती है। उस कीच में आनन्द मग्न हो कर लोग कृष्ण जन्मोत्सव के पद गाते व नाचते हैं और नाचते नाचते कीच में फिसल फिसल पड़ते हैं।

इस दधि काने में महाराजा स्वयं भी भाग लेते हैं, उन पर भी दही दूध उड़ेला जाता है। वे भी दूसरों पर दही दूध फेंकते हैं तथा अन्य लोगों की भाँति ही स्वयं भी नाचते हैं। भगवान के दरबार में राजा प्रजा का अन्तर समाप्त हो जाता है। सभी ब्रज के गोप व ग्वाल बाल बन जाते हैं।

इस दिन कृष्ण लीलायें भी की जाती हैं। महाराजा यश नारायण जी तो स्वयं दाढ़ी मूँछ लगाकर नन्द बाबा का अभिनय करते थे। याचकों को धन बाँटते थे। अन्य लोगों में कोई इन्द्र, कोई महादेव, ब्रह्मा आदि का अभिनय करते थे।

कई दिन तक इस उत्सव की धूम धाम रहती है।

## दशहरा

यहाँ विजया दशमी का उत्सव दो दिन मनाया जाता है। नवमी को किले के भीतर मन्दिर में सबसे पहले महाराजा कुल देवी "नागणेचा जी" का पूजन करते हैं। उसके बाद हाथी घोड़े व हथियारों का पूजन होता है। फिर महाराजा राजसिंह जी की पोशाक (जो खून से सनी हुई सरकारी खजाने में रखी है) के दर्शन किये जाते हैं।

इन सब कार्यों के बाद नजर दरबार होता है। १५ तोपों की सलामी दी जाती है। उमराव जागीरदार व ठिकानेदार आदि महाराजा की भेंट निछावर करते हैं।

दूसरे दिन दशमी को धान मण्डी से रघुनाथ जी सवारी पूरे राजसी ठाठ के साथ निकलती है। सवारी का जुलूस बाजार में होता हुआ रामलीला मैदान में पहुँचता है। महाराजा भी इस सवारी में भाग लेते हैं। मैदान में दशानन रावण की मिट्टी की मूर्ति को तोप के गोलों से उड़ाया जाता है। जिस तोपची का गोला रावण की नाभि में लगता है उसे इनाम दिया जाता है। रावण को मारे गये गोलों को जो लोग उठा कर लाते हैं उन्हें उन गोलों के बराबर गुड़ दिया जाता है।

रावण वध के बाद एक भैंसे को खूब मदिरा पिला कर मैदान में छोड़

दिया जाता है। महाराजा अन्य घुड़सवारों के साथ भाले … भ्रम करते हैं।

इसी प्रकार चैत्र सुदी नवमी को फिर दशहरा मनाया जाता है इसमें रघुनाथ जी की सवारी रावण वध आदि कुछ नहीं होता।

## गणगौर

यह यहाँ का सब से प्रसिद्ध त्योहार है एवं जयपुर के गणगौर समान ही किशनगढ़ का गणगौर उत्सव भी भारत व्यापी प्रसिद्ध चुका है।

चैत्र सुदी तीज को यह उत्सव मनाया जाता है। इस दिन शाम पाच बजे ईसर (ईश्वर) गणगौर की सवारी का जुलूस बड़ी सज धज राजसी ठाठ के साथ निकलता है। जिसमे एक दूसरे के पीछे क्रम सवार (ऊँट के सवार) जुजरबे (बन्दूक की तरह का हथियार) तोपें, नक्कारा निशान, रिसाला (घुड सवार) कोतल घोड़े (सोने अलकारो से सजे घोड़े घोड़ी) बड बाजा पलटन, राजपूत बोर्डिंग लड़के, उमराव—जागीरदार—ठिकानेदार कौंसिल। मुसद्दी जागी वेतन के अफसर) राजपत्रित कर्मचारी, अहलकलम (अराजपत्रित कर्मचारी) ढोलची व ढोलनियाँ गाती हुई, जनानी ड्योढ़ी का दरो पर हाकिम (हुकूमतो के अफसर) लेन डोरी मे भिनखा (एक रस्सी नौकरानियाँ रावतिणियाँ (कुछ नौकरानियाँ केवल इसी अवसर के लि जाती थी)। इन रावतिणियो मे से दो के सिर पर ईसर व गणगौर जी ओर मोरछल व झारी लिये हुए जोशी (राज जोशी) जनानी चौकीदार और पुलिस सिपाही रस्सी के घेरे को पकडे हुए इसके पीछे झूल व सोने चाँदी के जेवरो मे सजे हुए हाथी के ऊपर सोने के महाराजा। इस हाथी के पीछे रिसाले के सवार फिर अन्य सवारि बग्घी इत्यादि।

यह जुलूस नगर के बीच व बाजार मे होता हुआ सरवाडी द बाहर जाता है। वहाँ गणगौर जी के चबूतरे पर ईसर—गणगौर वि होते हैं। वही मैदान म घुड दौड व अन्य खेलकूद होते हैं। ईसर—गण को जल आरोगाया जाता है। इसके बाद सवारी उसी सजधज के सा मे वापस आती है।

# दर्शनीय स्थान

किसी भी देश के दर्शनीय स्थान वहाँ की संस्कृति का दिग्दर्शन कराते हैं। जो स्थान जितना प्राचीन होगा उतनी ही प्राचीन संस्कृति की झलक प्रस्तुत करेगा। किशनगढ़ राज्य के सीमान्तगत कई ऐसे दर्शनीय स्थल हैं, जो प्राचीन होने के साथ अपना भारत-व्यापी महत्व रखते हैं —

## (१) किले का मन्दिर

वैसे तो किशनगढ़ में सभी सम्प्रदायों के प्राचीन मन्दिर बने हुए हैं, परन्तु उन सबका महत्व स्थानीय है। किले में एक पुष्टिमार्ग (वल्लभ सम्प्रदाय) का शाही कृष्ण मन्दिर है जिसका महत्व भारत व्यापी है। इस मन्दिर में कल्याण राय जी (श्री नाथ जी का दूसरा नाम) और नृत्य गोपाल जी के स्वरूप में कृष्ण की पूजा होती है। यहाँ पूजा पद्धति पुष्टि मार्गीय है, जहाँ कृष्ण के बालस्वरूप को ही पूजा जाता है। राजसी ढंग से विशेष साज-सज्जा के साथ दिन में आठ दर्शन होते हैं—मंगला आरती, शृंगार, ग्वाल, राजभोग, उत्थापन, भोग संध्यारति, शयन आदि क्रम अहर्निश चलते हैं। दर्शनों के समय पुष्टि मार्गीय अष्ट छाप के कवियों (सूर, परमानन्द, नन्द दास, कृष्ण दास कुम्भन दास, चतुर्भुज दास छीतर स्वामी, गोविन्द स्वामी) के पदों का कीर्तन होता है।

भगवान कल्याण राय जी और नृत्य गोपाल जी के दर्शनों के अतिरिक्त यहाँ पुष्टिमार्ग के प्रवर्तक महाप्रभु श्री वल्लभाचार्य के प्राचीन चित्र के दर्शन कराये जाते हैं। वल्लभाचार्य का यह चित्र भारत भर में प्राचीनतम है तथा एक मात्र है जो सिकन्दर लोदी का बनवाया हुआ है तथा जिसे महाराजा रूप सिंह जी शाहजहाँ से से माँग कर लाये थे।

इस चित्र के कारण यह मन्दिर भारत भर के पुष्टिमार्गीय— भक्तों के लिए पावन तीर्थ बना हुआ है। यदि पुष्टिमार्गीय वैष्णव नाथ द्वारा कांकरोली

सूरत, कामवन मथुरा आदि प्रमुख वल्लभी मन्दिरो का दर्शन कर लें और किशनगढ न आयें तो उनकी तीर्थ यात्रा अधूरी समझी जाती है, क्योंकि आचार्य वल्लभ के दर्शन तो यहां ही होते हैं। इसलिए देखा गया है कि यहां प्रतिदिन कोई न कोई दूर का यात्री आता ही रहता है। विशेष रूप से गुजरात के यात्री क्योंकि गुजरात ही पुष्टिमार्गियों का गढ है।

कल्याण राय जी की मूर्ति भी वृन्दावन से रूप सिंह जी ही लाये थे तथा मूर्ति वल्लभाचार्य के प्रपौत्र गुसांई गोपीनाथ जी ने इन्हें प्रदान की थी। रूप सिंह जी ने इसे पहले मांडलगढ़ में, फिर रूपनगढ़ में स्थापित किया और तदनन्तर कल्याण राय जी किशनगढ के किले में पधराये गये। तब से आज तक यहीं विराजे हैं। किले में यह मन्दिर होने से ही किशनगढ वैष्णव साहित्य, संगीत और चित्रकला का साम तत्कालीन प्रमुख केन्द्र रहा है। वल्लभाचार्य के वंशज (गुसाई बालक) श्री दीक्षित जी महाराज ही आज इस मंदिर के आचार्य तथा राजगुरु हैं।

## (२) पीताम्बर की गाल

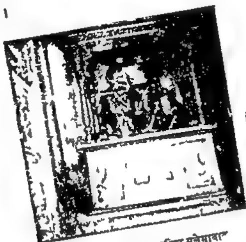
यह नसीराबाद मार्ग पर ५ मील दूर पहाडो में अवस्थित है। यह स्थान प्राकृतिक सौंदर्य से भरपूर है। यहां हरे भरे पहाड, जलाशय, कदम्ब वृक्षादि बड़े आकर्षक हैं। प्राचीनकाल से ही यह स्थान साधुओं की तपोभूमि बना हुआ है। यहां पर पीताम्बर नाम के बड़े तपस्वी महात्मा हो गये हैं, जिनके नाम से ही इसे पीताम्बर की गाल (पहाडी दर्रा) कहा जाता है। पीताम्बर प्रसिद्ध गायक तानसेन के संगीत गुरु स्वामी हरिदास जी की शिष्य परम्परा में हुए हैं, जो राधा कृष्ण के रसिक भक्त थे। औरंगजेब के समय मथुरा पर यावनी आक्रमण हो जाने से भगवान श्री नाथ जी की मूर्ति को वहां से राजस्थान में नाथ द्वारा लाया गया था। मार्ग में उन्हें इसी गाल स्थान पर कई दिनों तक पधराया गया था, जिसकी पवित्र स्मृति में यहां श्री नाथ जी की बैठक बनी हुई है। आज कल यहां राम सखा सम्प्रदाय के तपस्वी महात्मा सियारामशरण जी रहते हैं जिन्होंने गाल का वैभव खूब बढा दिया है।

## (३) अखिल भारतीय जगतगुरु निम्बार्काचार्य पीठ परशुराम पुरी (सलेमाबाद)

यह स्थान किशनगढ से १३ मील दूर रूपनगढ़ की ओर है। यहां परशुराम देवाचार्य ने विक्रमी सम्वत १५५० के लगभग यवनो के अत्याचारों का दमन

किया था और पुष्कर को यवनों से मुक्त कराया था। ये बड़े चमत्कारी महात्मा प्रसिद्ध कवि एवं वैष्णवाचार्य हुए हैं। उस समय के सभी राजपूत इनके शिष्य बन गये और परशुराम देव से प्रार्थना करने लगे कि यहीं आश्रम बना कर सदैव निवास करें। कालांतर में परशुराम देव द्वारा स्थापित यही आश्रम अखिल भारतीय जगतगुरु निम्बार्काचार्य का प्रधान पीठ स्थान बन गया और अब भी है।

श्री परशुराम का तपस्थान और श्री राधा कृष्ण का मंदिर यहाँ के दर्शनीय स्थान हैं।



श्री राधा कृष्ण का मन्दिर सलेमाबाद

वर्तमान समय में भी अखिल भारतीय जगतगुरु निम्बार्काचार्य श्री जी महाराज यहीं रहते हैं। इस प्रकार भारत भर के निम्बार्कीय वैष्णवों का प्रधान आचार्य स्थान भी किशनगढ़ राज्यान्तर्गत ही रहा है। इस पीठ के आचार्यों ने राजस्थान एवं दिल्ली की राजनीति में भी प्रमुख भाग लिया है और हिन्दी के भक्ति साहित्य की महान् सेवा की है। अस्तु परशुरामपुरी (सलेमाबाद) किशनगढ़ का गौरव है।

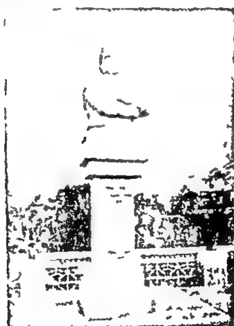
## स्वामी विवेकानन्द स्मारक

सन १८९९ में राजस्थान में भयंकर अकाल पड़ा था। उन दिनों स्वामी विवेकानन्द जी के दो शिष्य स्वामी कल्याणानन्द जी व स्वामी निर्मलानन्द जी ने किशनगढ़ में रह कर तत्कालीन किशनगढ़ नरेश महाराजा शार्दूल सिंह के सहयोग से एक वर्ष से भी अधिक समय तक अकाल राहत कार्य

चलाया। प्रतिदिन १००० नर-नारियों के लिए भोजन की व्यवस्था की। महाराजा शार्दूल सिंह के सहयोग से बालक एवं बालिकाओं को ईसाई मिशनरियों से बचाया और दो अनाथालय खोले।

स्वामी विवेकानन्द जी स्वयं अलवर से किशनगढ़ पधारे थे तथा किशनगढ़ से अजमेर पुष्कर होते हुए सौराष्ट्र की यात्रा को गये थे। स्वामी जी जब अमरीका से लौटे थे तब खेतड़ी से फिर किशनगढ़ पधारे थे।

स्वामी विवेकानन्द जी के जीवन के कई महत्वपूर्ण क्षण यहाँ पीड़ित नर-नारायण के उद्धार के चिन्तन में व्यतीत हुए हैं तथा स्वामी जी के पावन चरणों से यह भूमि दो बार पवित्र हुई है। उसी स्थान पर जहाँ स्वामी जी के दोनों शिष्य रहे थे तथा स्वामी जी स्वयं पधारे थे। इसी की पुण्य स्मृति स्वरूप यह स्मारक स्वामी जी के भक्तों द्वारा निर्मित कराया गया है।



स्वामी विवेकानन्द की मूर्ति

इस स्मारक के दर्शनार्थ रामकृष्ण मिशन के बड़े-बड़े सन्त महात्माओं का आवागमन होता रहता है।

गून्दोलाव झील के तट पर बने इस मुरम्य स्मारक रूपी तीथ की अपनी विशेषता है। वर्षा ऋतु म यहाँ से देखने पर झील की प्राकृतिक छटा मन को लुभाने वाली होती है।

इस स्थान का भू गमशास्त्र की दृष्टि स भी अपना एक विशेष महत्व है। यहाँ पर न्ल्लिो पवत माला समाप्त होती हैं और अरावली की श्रेणियाँ प्रारम्भ हाती हैं। प्रति वष सकडो की सख्या म भूगभवेत्ता एव शोधकर्ता सर्वेक्षण के लिए यहाँ आते रहते हैं।

## किशनगढ के अन्य दशनीय स्थान

## फूल महल

गून्दोलाव सरोवर के किनारे महाराजा सावन्त सिंह (नागरी दास जी) ने बनवाया था।

### मोखम विलास

महाराजा पृथ्वी सिंह ने अपन पिता महाराजा मोखम सिंह की स्मृति में बनवाया था, जो तीन ओर गून्दोलाव सरोवर से घिरा हुआ है।

### मझेला कोठी

मझ का मारवाडी भाषा मे अर्थ है—बीचा बीच और ला' का अथ है—का, अर्थात यह पहाडो से घिरा हुआ, बीहड बन के बीचों बीच एक सुरम्य स्थान है। यहाँ 'मझेला कोठी' के नाम से महाराजा किशनगढ का एक सुन्दर महल है। इसके समीप दो नैसर्गिक जलाशयो तथा बगीचे ने इस महल के सौन्दय को चार चाँद लगा दिय हैं।

इस महल का महाराजा शादूल सिंह ने वैभव बढाया। पहले यहाँ किशनगढ नरेशो का ग्रीष्मवास रहता था अब यह किशनगढ नरेश का स्थायी निवास स्थान है।

### मित्र निवास कोठी

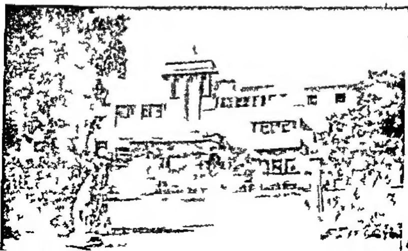
यह भी एक दशनीय एव भव्य महल है।

इन स्थानो के अतिरिक्त श्री ब्रजराज जी श्री गोवद्धन नाथ जी, श्री मदनमोहन लाल जी एव श्री सुख निधान जी के कृष्ण मन्दिर तथा श्री चिन्ता मणि जी का जन मन्दिर भी दशनीय हैं।

रूप नगर मे—

महाराजा रूप सिंह जी का बनवाया हुआ किला है। श्री रूप श्याम का प्रसिद्ध मंदिर तथा सुल्तान पीर की दरगाह है।

मजला पलेस (फाटक से घुसते समय का दृश्य)

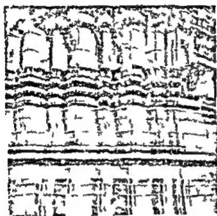


भॅरई में—

श्री जी का मदिर दर्शनीय है।

सरवाड़ मे—

श्री चारभुजा नाथ जी एव श्री गोपाल जी के मदिर प्रसिद्ध हैं। एक अन्य ऐतिहासिक मदिर श्री गोपी नाथ जी का भी है।



सरवाड़ के मन्दिर की दीवार

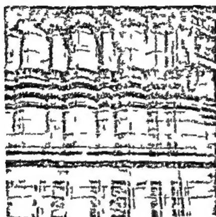
यहाँ पर ख्वाजा मुइनुद्दीन चिश्ती अजमेर वाला के साहबजादे ख्वाजा फखरुद्दीन की प्रसिद्ध दरगाह भी है जहा अजमेर के उर्स से एक महीने बाद उर्स लगता है।

भरई में—

श्री जी का मंदिर दर्शनीय है।

सरवाड में—

श्री चारभुजा नाथ जी एवं श्री गोपाल जी के मंदिर प्रसिद्ध हैं। एक अन्य ऐतिहासिक मन्दिर श्री गोपी नाथ जी का भी है।



सरवाड के मन्दिर का दावार

यहां पर ख्वाजा मुइनुद्दीन चिश्ती अजमेर वाला के साहबजादे ख्वाजा फखरुद्दीन की प्रसिद्ध दरगाह भी है जहा अजमेर के उर्स से एक महीने बाद उर्स लगता है।